हक़-हलाल की कमाई

राधास्वामी सत्संग ब्यास

हक़-हलाल

की

कमाई

राधास्वामी सत्संग ब्यास

प्रकाशक:
जे. सी. सेठी, सेक्रेटरी
राधास्वामी सत्संग ब्यास
डेरा बाबा जैमल सिंह
पंजाब 143 204

© 1981, 2009 राधास्वामी सत्संग ब्यास
सर्वाधिकार सुरक्षित पहला संस्करण 1981

इक्कीसवाँ संस्करण 2009

मुद्रक: थॉम्सन प्रेस (इंडिया) लि

Translated from the Punjabi language edition 'Haq Halal di Kamai'
© Radha Soami Satsang Beas

Published by:
J. C. Sethi, Secretary
Radha Soami Satsang Beas
Dera Baba Jaimal Singh
Punjab 143 204

© 1981, 2009 Radha Soami Satsang Beas
All rights reserved First edition 1981

Twenty first edition 2009

20 19 18 17 16 15 8 7 6 5 4

ISBN 978-81-8466-404-1

Printed in India by: Thomson Press (India) Ltd.

दो शब्द

संतमत आध्यात्मिक उन्नति का व्यावहारिक मार्ग है। इस मार्ग में निर्मल और पवित्र रहनी, सात्त्विक आहार तथा ऊँचे पवित्र विचारों का बहुत महत्त्व है, क्योंकि सदाचार और नैतिकता की सुदृढ़ नींव पर ही रूहानी तरक्की और नाम के अभ्यास के मज़बूत क़िले का निर्माण किया जा सकता है। नेक कमाई का प्रभाव आहार, विचार तथा आचरण, तीनों पर पड़ता है। इसलिए संत-महात्माओं ने नेक कमाई अथवा हक़-हलाल की कमाई को प्रभुप्राप्ति के मार्ग में अग्रसर होने के लिए एक आवश्यक आधार माना है। संतों ने स्वयं अपने जीवन में इस सिद्धांत का दृढ़तापूर्वक पालन किया है तथा अपने शिष्यों को नेक कमाई पर गुज़ारा करने के लिए निरंतर सावधान करते रहे हैं।

आशा है कि इस पुस्तिका से जिज्ञासुओं तथा सत्संगियों को संत-महात्माओं के हक़-हलाल की कमाई के उपदेश पर विचार करने तथा उसके अनुसार अपना जीवन ढालने की प्रेरणा मिलेगी।

डेरा बाबा जैमल सिंह,
ज़िला अमृतसर (पंजाब)
जनवरी, 1994

सेवा सिंह,
सेक्रेटरी,
राधास्वामी सत्संग ब्यास।

पाठकों से निवेदन

बानी का सही उच्चारण

गुरबानी

अकसर देखने में आया है कि हिंदी पाठक श्री गुरु ग्रन्थ साहिब की बानी (गुरबानी) का शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते हैं। गुरबानी मूल रूप में गुरुमुखी लिपि में लिखी गई है। इसमें कई शब्दों के अंत में ह्रस्व इ (ਿ) और ह्रस्व उ (ੁ) की मात्राओं का प्रयोग किया गया है। यह प्रयोग केवल व्याकरण की दृष्टि से है; बानी पढ़ते समय इन मात्राओं का आमतौर पर उच्चारण नहीं किया जाता। हिंदी पाठक बड़े प्रेम से गुरबानी का पाठ या गायन करने का यत्न करते हैं, लेकिन इन मात्राओं और कुछ अन्य अपरिचित हिज्जों (स्पेलिंग) के कारण अनजाने में उच्चारण ग़लत हो जाता है। हम श्री गुरु ग्रन्थ साहिब का पूरा सम्मान करते हैं। हम चाहते हैं कि पाठक बानी का उच्चारण ग़लत न करें। इसलिए गुरबानी का रूपांतर देवनागरी लिपि में करते समय ये ह्रस्व मात्राएँ हटा दी गई हैं और अन्य कुछ परिवर्तन कर दिए गए हैं ताकि हिंदी भाषा के पाठक गुरबानी का सही उच्चारण कर सकें।

उदाहरण के रूप में :

मूल रूप: कुदरति पउणु पाणी बैसंतरु कुदरति धरती खाकु॥
सभ तेरी कुदरति तूं कादिरु करता पाकी नाई पाकु॥
नानक हुकमै अंदरि वेखै वरतै ताको ताकु॥

उच्चारण रूप: कुदरत पउण पाणी बैसंतर कुदरत धरती खाक॥
सभ तेरी कुदरत तूं कादिर करता पाकी नाई पाक॥
नानक हुकमै अंदर वेखै वरतै ताको ताक॥

यहाँ यह बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि इन मात्राओं का प्रयोग पढ़ने में भले ही नहीं होता, लेकिन गुरबानी में इन मात्राओं का व्याकरण और अर्थ की दृष्टि से विशेष महत्त्व है। गुरु साहिबान के संदेश को अधिक गहराई से समझने के इच्छुक गुरबानी का मूल रूप में अध्ययन कर सकते हैं।

हिंदी बानी

हिंदी बानी में कहीं-कहीं 'ख' वर्ण को 'ष' लिखा जाता है—जैसे देषि, मूरिष, पंषी। लेकिन इन शब्दों का उच्चारण देखि, मूरिख, पंखी किया जाता है। इसलिए सही उच्चारण की दृष्टि से इस पुस्तक में आवश्यकतानुसार 'ष' के स्थान पर 'ख' वर्ण का प्रयोग किया गया है।

प्रकाशक

हक़-हलाल की कमाई

संतमत कथनी का नहीं, करनी का मार्ग है। यह अध्यात्म के उच्च और पवित्र सिद्धांतों को अमली जामा पहनाने पर और उन्हें अपने जीवन में व्यावहारिक रूप में उतारने पर ज़ोर देता है। संत-महात्माओं ने नेक कमाई की महिमा की है और इस बात पर ज़ोर दिया है कि परमार्थ के एक सच्चे साधक के लिए अपनी निजी कमाई, दसां नौहाँ[1] की कमाई अथवा हक़-हलाल की कमाई[2] बहुत ज़रूरी है। कहावत हैः जैसा खावे अन्न, वैसा होवे मन। अनुचित रूप से कमाए हुए धन से प्राप्त आहार या भोजन, अनुचित विचारों और अनुचित वृत्तियों को जन्म देता है। ऐसा आहार मन को निकृष्ट विचारों तथा संकल्पों का अखाड़ा बना देता है, जिसके फलस्वरूप परमार्थ में उन्नति करना असंभव हो जाता है। अपनी मेहनत की कमाई को त्यागकर अपना बोझ दूसरों पर डाल देनेवाले, पूजा के धन, चढ़ावे और भेंट पर पलनेवाले और चोरी, ठगी, बेईमानी, धोखे, छल आदि द्वारा पराया धन हथियाने वाले लोग परमार्थ में उन्नति नहीं कर सकते। चाहे ऐसे लोग अपने आप को बहुत बुद्धिमान, सयाने या चतुर समझें, पर असल में वे अपने आप को ही धोखा दे रहे हैं।

इसी लिए संत-महात्माओं ने नेक कमाई पर ज़ोर दिया है। वे कहते हैं कि मन और आत्मा की गाँठ बँधी हुई है जिसे जड़-चेतन की गाँठ कहा जाता है। मन की प्रवृत्ति चंचल है, वह पल भर के लिए भी स्थिर

---

1. दसों नाख़ूनों अर्थात् अपनी मेहनत की कमाई।
2. **हक़-हलाल की कमाई**=अपनी मेहनत और ईमानदारी से कमाया धन।

या निश्चल नहीं रहता; और जब तक मन साथ न दे, आत्मा अंतर में चढ़ाई करने में सफल नहीं हो सकती। हक़-हलाल की कमाई पर गुज़ारा करने से मन की चंचलता को कम करने तथा उसका झुकाव अंदर की ओर करने में सहायता मिलती है, जिससे अभ्यासी के लिए आध्यात्मिक यात्रा तय करना सहज हो जाता है। आध्यात्मिक उन्नति का बीज केवल मेहनत के सच्चे और पवित्र खेत में ही अंकुरित हो सकता है। सच्चे परमार्थ में भीख, बेईमानी और धोखे द्वारा कमाए हुए धन के लिए कोई स्थान नहीं है।

जब कोई रोगी इलाज के लिए डॉक्टर के पास जाता है तो डॉक्टर उसके रोग की पहचान करके उसे दवाई देता है। साथ ही वह रोगी को दो बातें ध्यान में रखने की हिदायत देता है—एक तो यह कि दवाई समय पर ली जाए और दूसरी यह कि बताए गए परहेज़ की पालना ज़रूर की जाए। रूहानियत के क्षेत्र में संत-सतगुरु अज्ञानता से पीड़ित संसारियों के लिए डॉक्टर या वैद्य बनकर आते हैं। वे उन्हें नाम की दवाई देते हैं और उसके नियमपूर्वक सेवन की ताकीद करते हैं। साथ ही वे उन्हें कुछ ज़रूरी परहेज़ भी बताते हैं, जिनमें से एक यह है कि वे पराया हक़ छीनने या छल-कपट से धन कमाने से बचें और हक़-हलाल की कमाई पर गुज़ारा करें।

संत-महात्माओं ने अपने उपदेश में स्पष्ट और ज़ोरदार शब्दों में हक़-हलाल की कमाई पर बल दिया है। परमात्मा के भक्तों ने स्वयं नेक रहनी तथा हक़-हलाल की कमाई की ज़िंदा मिसाल बनकर परमार्थ के साधकों को जीवन में अधिक से अधिक पवित्रता अपनाने की प्रेरणा दी है। हक़-हलाल की कमाई से महात्माओं का तात्पर्य उस धन से है जो सच्चाई और नेकी के द्वारा कमाया गया हो, जिस पर न्याय, कानून और नैतिक दृष्टि से उपभोग करनेवाले का हक़ या अधिकार हो, जिसे कमाने में देश और समाज के नियमों तथा मानवता का हनन न किया गया हो, जिसे प्राप्त करने के लिए किसी का नुकसान न किया गया हो तथा जिसमें से परिवार तथा अन्य भागीदारों को उनका हिस्सा न्यायपूर्वक दे दिया गया हो।

सुक्रित

सच्ची और नेक कमाई, सात्त्विक आहार, शुभ विचार, नेक आचरण, मालिक के प्रेमियों की संगत और नाम का अभ्यास, संतमत की प्रमुख आवश्यकताएँ हैं। शब्द अथवा नाम की कमाई, आहार, विचार और आचार की पवित्रता के सहारे ही हो सकती है। संतों ने इस विषय की विस्तारपूर्वक व्याख्या की है। संत नामदेव ने *सुक्रित* अर्थात् अच्छे, नैतिक कर्मों द्वारा की गई कमाई से गुज़ारा करने को बहुत महत्त्व दिया है। ऐसी नेक कमाई की महिमा बताते हुए आप कहते हैं कि इससे मनुष्य *सुमत* अर्थात् अच्छी निर्मल बुद्धि वाला होकर गुरुमत में रहकर नाम का अभ्यास करने के योग्य हो जाता है और इस प्रकार वह परमधाम प्राप्त कर सकता है:

भनत नामदेउ सुक्रित सुमत भए॥
गुरमत राम कह को को न बैकुंठ गए॥ (1)

संत नामदेव ख़ुद भी पूरी ज़िंदगी, छीपे और दर्ज़ी का कार्य करते हुए अपनी ईमानदारी की कमाई पर गुज़ारा करते रहे।

गुरु अंगद देव जी ने भी सभी वर्गों के लोगों के लिए नेक कमाई के नियम पर ज़ोर दिया है। आपने भी *सुक्रित* को धर्म का अर्थात् अध्यात्म में उन्नति का आधार बताया है:

कर सुक्रित धरम कमाइआ॥ (2)

हर समय की तरह गुरु नानक देव जी के समय में भी एक तरफ़ राजा, हाकिम और अधिकारी, दूसरी तरफ़ पंडित, पुरोहित, मुल्ला तथा क़ाज़ी और तीसरी तरफ़ व्यापारी और धनी लोग मेहनत की नेक कमाई से दूर जा रहे थे। आम लोगों की रहनी में भी सच्चाई और ईमानदारी का अभाव होता जा रहा था। गुरु साहिब का *धरम* को *सुक्रित* के साथ जोड़ना, बेकार बैठे लोगों, दूसरों की कमाई पर ऐश करनेवालों और ठगी-बेईमानी करनेवालों के लिए एक गंभीर चेतावनी था और आज भी है।

धार्मिक नेता पराया धन लेने में, क़ाज़ी और हाकिम रिश्वत लेने में पाप नहीं समझते थे। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं कि तस्बीह (माला) फेरनेवाले और ख़ुदा-ख़ुदा करनेवाले लोग जब इनसाफ़ की कुर्सी पर बैठते हैं तो रिश्वत खाकर दूसरों के हक़ या अधिकारों को छीन लेते हैं। यदि उनसे कुछ कहा जाए तो वे धर्मपुस्तकों का हवाला देकर अपने आप को ठीक साबित करने का प्रयत्न करते हैं:

काजी होए कै बहै निआए॥ फेरे तसबी करे खुदाए॥
वढी[1] लै कै हक गवाए॥ जे को पुछै ता पड़ सुणाए॥ (3)

गुरु साहिब फ़रमाते हैं कि लोगों के गलों पर छुरी चलानेवाले पुरोहित आदि, अपने गले में जनेऊ पहनकर अपनी पवित्रता का दिखावा करते हैं। हर तरफ़ झूठ और छल प्रधान है; सच्चाई, ईमानदारी और धर्म पंख लगाकर उड़ गए हैं। अपने आप को धर्मात्मा कहनेवाले पुरोहित लोग, बेईमानी और अन्याय के द्वारा धन कमानेवाले लोगों के घरों में जाकर, पूजा आदि करवाकर, पुराणों में से कथाएँ सुनाकर पाप की कमाई का अन्न खाते हैं:

माणस खाणे[2] करह निवाज॥ छुरी वगाइन[3] तिन गल ताग[4]॥
तिन घर ब्रहमण पूरह नाद॥ उन्हा भि आवह ओई साद॥
कूड़ी[5] रास[6] कूड़ा वापार॥ कूड़ बोल करह आहार॥
सरम धरम का डेरा दूर॥ नानक कूड़ रहिआ भरपूर॥
मथै टिका तेड़ धोती कखाई॥ हथ छुरी जगत कासाई[7]॥
नील वसत्र पहिर होवह परवाण॥ मलेछ धान ले पूजह पुराण॥ (4)

---

1. रिश्वत, अन्यायपूर्वक धन लेना। 2. मनुष्य तक का भक्षण करनेवाले अर्थात् स्वार्थ के लिए दूसरों को किसी भी प्रकार की हानि पहुँचाने को तैयार।
3. चलानेवाले। 4. जनेऊ। 5. झूठी। 6. धन-संपत्ति। 7. जगत के क़साई, सारे संसार पर ज़ुल्म करनेवाले।

गुरु साहिब फ़रमाते हैं कि लोग अनेक प्रकार की चोरी, ठगी, दुराचार और झूठ के पाप का भार अपने ऊपर लादे जा रहे हैं:

लख चोरीआ लख जारीआ लख कूड़ीआ लख गाल॥
लख ठगीआ पहिनामीआ[1] रात दिनस जीअ नाल॥ (5)

घाल खाए किछ हथहो दे

गुरु नानक साहिब ने राजा, प्रजा, पंडित, मूर्ख, विद्वान, अनपढ़, हिंदू और मुसलमान सभी के लिए *सुक्रित* अथवा नेक कमाई के नियम पर ज़ोर दिया। इस प्रकार आप सच्चे धर्म को मंदिरों, मस्जिदों, ठाकुरद्वारों, गिरजाघरों आदि की चारदीवारी से निकालकर खेतों, दुकानों, कचहरियों, दफ़्तरों यानी मनुष्य के दैनिक जीवन में ले आए। आपने केवल उन्हीं लोगों को धार्मिक क्रिया और रूहानी अभ्यास के योग्य माना जो हक़-हलाल की कमाई पर गुज़ारा करते हैं। गुरु नानक देव जी ने स्वयं वर्षों तक दौलतखां लोदी के मोदीख़ाने में सच्चाई तथा पूरी ईमानदारी के साथ काम किया और इस कमाई में से खुले दिल से ग़रीबों-अनाथों की मदद की। बाद में आपने करतारपुर में खेती की और अपनी नेक कमाई पर गुज़ारा करते हुए ज़रूरतमंदों की सहायता भी की। आपने स्वयं एक सच्चे परमार्थी का जीवंत उदाहरण स्थापित किया ताकि आपके उपदेश के इस मूल पहलू—नेक कमाई—के विषय में किसी प्रकार का कोई भ्रम न रह जाए। आपने अपनी वाणी में बहुत स्पष्ट और सरल शब्दों में गुरुओं, पीरों तथा शिष्यों के लिए निजी कमाई तथा अपनी सच्ची और पवित्र कमाई पर निर्वाह करते हुए उसमें से ज़रूरतमंदों की सहायता करने का आदर्श स्थापित किया है:

गुर पीर सदाए मंगण जाए॥ ता कै मूल न लगीऐ पाए॥
घाल खाए किछ हथहो दे॥ नानक राह पछाणह से॥ (6)

---

1. गुप्त रूप से और छिपकर किए गए पाप।

अर्थात् अगर कोई गुरु या पीर होकर शिष्यों से माँगता फिरता है तो उसके पैरों पर कभी सिर नहीं झुकाना चाहिए। जो मेहनत करके अपनी रोज़ी कमाता हो और उस हक़-हलाल की कमाई में से साधसंगत की सेवा करता हो, वही परमार्थ की राह का सच्चा जानकार, सच्चा गुरु हो सकता है।

यह सबको पता है कि गुरु नानक साहिब ने ऐमनाबाद में मलिक भागो के छत्तीस प्रकार के पकवानों को त्यागकर, भाई लालो की कोधरे की रोटी को पसंद किया, क्योंकि आपको पहले प्रकार के भोजन में ग़रीब लोगों का ख़ून मिला हुआ दिखाई दिया तथा दूसरे प्रकार के भोजन में हक़-हलाल की कमाई का अमृत।

कबीर साहिब ने अपने समय के अधूरे और पाखंडी गुरुओं की आलोचना करते हुए लिखा है कि वे लोभवश शिष्यों को लूटते हैं। उनके शिष्य भी अपने स्वार्थ के लिए ही ऐसे गुरुओं के साथ लगे रहते हैं। ऐसे लोगों को शांति कैसे मिल सकती है? आप कहते हैं कि ऐसे गुरु पैसे के पचास मिलते हैं। वे राम-नाम को बेचकर उसे अपनी कमाई का साधन बनाते हैं और ऐसे धन से शिष्यों की गिनती बढ़ाने का यत्न करते हैं:

कबीर पूरे गुरु बिना, पूरा सिष्य न होय।
गुरु लोभी सिष लालची, दूनी दाझन होय॥
गुरुआ तो सस्ता भया, पैसा केर पचास।
राम नाम को बेचि के, करै सिष्य की आस॥ (7)

कबीर साहिब ने गुरु तथा शिष्य दोनों के लिए बहुत ऊँचा आदर्श स्थापित किया है। आप फ़रमाते हैं कि शिष्य को चाहिए कि अपना सब कुछ गुरु को अर्पण कर दे अर्थात् सब कुछ गुरु का समझकर इस्तेमाल करे, परंतु गुरु को चाहिए कि शिष्य की सूई तक को हाथ न लगाए:

सिष तो ऐसा चाहिये, गुरु को सब कछु देय।
गुरु तो ऐसा चाहिये, सिष से कछु न लेय॥ (8)

कबीर साहिब स्पष्ट कहते हैं कि महात्मा अपने शिष्यों का धन साधसंगत की सेवा या परोपकार में अवश्य ख़र्च करवा देते हैं ताकि उनकी कमाई सार्थक हो तथा परमार्थ के राह पर चलने में सहायक सिद्ध हो। परंतु शिष्यों से महात्मा निजी ज़रूरतों या निजी लाभ के लिए कभी एक पाई भी नहीं लेते:

मरि जाऊँ माँगूँ नहीं, अपने तन के काज।
परमारथ के कारने, मोहिं न आवै लाज॥ (9)

जैसा कि सब जानते हैं, कबीर साहिब ने जीवन भर कपड़ा बुनने का काम करके अपना और अपने परिवार का पालन किया। आप जब भी संतमत के प्रचार या सत्संग के लिए बाहर जाते, अपना करघा साथ ले जाते थे।

हुज़ूर स्वामी जी महाराज फ़रमाते हैं कि संत-सतगुरुओं के पास नामभक्ति का अखूट भंडार होता है। वे दुनियावी धन-दौलत की ओर नज़र उठाकर भी नहीं देखते। वे अपने शिष्यों से अपने गुज़ारे के लिए कभी कुछ नहीं लेते, हाँ, परमार्थ के लिए अपने शिष्यों से परोपकार ज़रूर करवाते हैं:

गुरु नहिं भूखा तेरे धन का। उन पै धन है भक्ति नाम का॥
पर तेरा उपकार करावें। भूखे प्यासे को दिलवावें॥ (10)

आपका अपना जीवन हक़-हलाल की कमाई का एक प्रेरणादायक उदाहरण है। छोटी उम्र से ही आपका परमात्मा की ओर झुकाव था। इसलिए आप ऐसी नौकरी चाहते थे जिसमें स्वार्थ और परमार्थ दोनों साथ-साथ चल सकें। आपने बल्लभगढ़ के राजा के पास फ़ारसी के अध्यापक के रूप में नौकरी की, जिसमें तीन घंटे प्रतिदिन लगाने पड़ते थे। उन दिनों राजाओं के कर्मचारियों को वेतन के साथ गुज़ारे के लिए रसद भी मिला करती थी। स्वामी जी महाराज सारी रसद ज़रूरतमंदों में बाँट दिया करते थे और वेतन का काफ़ी बड़ा हिस्सा

अपने पिता जी को भेज देते थे। रोज़ी कमाते हुए भी आपके मन में पूर्ण वैराग्य था।

स्वामी जी महाराज के पिता जी घर के गुज़ारे के लिए साहूकारी किया करते थे। पिता जी के देहांत के बाद स्वामी जी ने सभी क़र्ज़दारों को बुलाकर कहा कि जो कोई क़र्ज़े की मूल रकम चुकाना चाहे, चुका दे और जो न लौटाना चाहे वह न लौटाए। उन्होंने क़र्ज़दारों के सामने क़र्ज़े के सारे काग़ज़-पत्र फाड़ दिए और सूद की आमदनी सदा के लिए बंद कर दी।

पापा बाझहो होवै नाही

संत-महात्मा कहते हैं कि धन-दौलत पापों के बिना इकट्ठी नहीं होती और अंत समय साथ नहीं जाती। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं कि लोग धन-दौलत इकट्ठा करने में खोए हुए हैं और इस बात पर विचार करने का यत्न नहीं करते कि वे पापों का ऐसा भारी बोझ इकट्ठा कर रहे हैं जो अनेक लोगों के रूहानी विनाश का कारण बन चुका है और अब उनके विनाश का कारण बनेगा:

इस जर[1] कारण घणी[2] विगुती[3] इन जर घणी खुआई[4]॥
पापा बाझहो होवै नाही मुइआ साथ न जाई॥ (II)

धन जो पाप के बिना इकट्ठा नहीं हो सकता, मृत्यु के बाद साथ नहीं जा सकता और प्रभु की दरगाह में दुर्दशा का कारण बनता है, वह हमारे लिए लाभप्रद किस प्रकार हो सकता है? गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं कि राजा, शासकीय अधिकारी आदि धन के मोह के अधीन, परायी दौलत हथियाकर माया के विष का भंडार इकट्ठा कर लेते हैं। वास्तव में लोभ, लालच और माया उनको छल लेते हैं और अंत समय उन्हें यम के हाथों चोटें सहनी पड़ती हैं:

---

1. धन। 2. बहुत। 3. ख़्वार हुई। 4. कुमार्ग पर भटक गई।

भूपत राजे रंग राए[1] संचह[2] बिख[3] माइआ[4]॥
कर कर हेत वधाइदे पर दरब[5] चुराइआ॥
पुत्र कलत्र न विसहहे[6] बहु प्रीत लगाइआ॥
वेखदिआ ही माइआ धुह गई[7] पछुतह पछुताइआ॥
जम दर बधे मारीअह नानक हर भाइआ॥(12)

इसी भाव को प्रकट करते हुए गुरु अर्जुन देव जी फ़रमाते हैं कि राजा, महाराजा, हाकिम, शासकीय अधिकारी और धनी लोग, परमात्मा का भय त्यागकर अनेक ज़ुल्म करके धन एकत्रित करते हैं, परंतु यह धन-दौलत, यह साज़ो-सामान, सब मौत के साथ ही ख़त्म हो जाता है:

भूपत होए कै राज कमाइआ॥ कर कर अनरथ विहाझी[8] माइआ॥
संचत संचत थैली कीन्ही॥ प्रभ उस ते डार[9] अवर[10] कउ दीन्ही॥
काच गगरीआ अंभ मझरीआ[11]॥ गरब गरब उआहू मह परीआ[12]॥
निरभउ होइओ भइआ निहंगा[13]॥ चीत[14] न आइओ करता संगा॥
लसकर जोड़े कीआ संबाहा[15]॥
निकसिआ फूक[16] त होए गइओ सुआहा[17]॥(13)

हमारे मन में हमेशा यह चिंता रहती है कि यदि हम बेईमानी नहीं करेंगे तो संसार के काम नहीं चलेंगे। परंतु जिन लोगों ने अपने जीवन में नेकी, सच्चाई और ईमानदारी से काम लिया है, वे सदा यही कहते हैं कि ईमानदारी की कमाई में बहुत बरकत अथवा सुख-समृद्धि है और प्रभु स्वयं किसी न किसी प्रकार उनके सभी कार्य पूर्ण कर देता है।

---

1. धनी। 2. इकट्ठा करना। 3. ज़हर। 4. माया। 5. पराया धन।
6. विश्वास। 7. **माइआ...गई**=माया धोखा दे गई, धन जाता रहा।
8. ख़रीदी भाव प्राप्त की। 9. लेकर। 10. दूसरे को। 11. पानी के बीच में।
12. **उआहू...परीआ**=बार-बार उसी में गिरता है, अर्थात् उसे बार-बार जन्म लेना पड़ता है। 13. निश्चिंत। 14. याद। 15. इकट्ठा किया। 16. साँस निकल गई।
17. राख हो गया अर्थात् मर गया।

यह ठीक है कि अपनी मेहनत और नेक कमाई के द्वारा कोई व्यक्ति ऐशो इशरत तो नहीं कर सकता, परंतु यह कमाई मांस, शराब, इंद्रियों के भोगों तथा अन्य कई प्रकार के दुराचार तथा पापों से बचाती है। यह मन में संतोष तथा प्रभु का प्रेम और विश्वास पैदा करती है और सच्चे परमार्थ की नींव तैयार करती है।

भुखिआ भुख न उतरी

जो लोग सच्चे दिल से महसूस करते हैं कि सच्चा और स्थायी आनंद, नेक जीवन और प्रभुप्राप्ति में है, वे प्रसन्नतापूर्वक हक़-हलाल की कमाई का नियम स्वीकार करते हैं। जो लोग आचरण की पवित्रता और आत्मिक आनंद से परिचित हैं या जो इसकी प्राप्ति के इच्छुक हैं, वे अनुचित ढंग से की गई कमाई का त्याग करते हैं। इस प्रकार की कमाई का त्याग उन्हें परमार्थरूपी हीरे-जवाहरात की प्राप्ति के लिए ईंटों-पत्थरों की क़ुर्बानी के समान प्रतीत होता है। परंतु जो लोग इस आनंद से अनजान हैं और जिन्हें इसे प्राप्त करने की कोई चाह नहीं, उन्हें दुनिया के नाशवान भोग और धन-दौलत ही सब कुछ प्रतीत होते हैं। वे यह नहीं जानते कि ये भोग और अनुचित ढंग से कमाया गया धन, लोक और परलोक दोनों में ही उनकी दुर्दशा का कारण बनता है। अतएव मनुष्य को चाहिए कि जो कुछ अपनी हक़-हलाल की कमाई से मिले उस पर संतोष करे तथा भोगों के लालच से बचे। धन की तृष्णा अग्नि के समान है जो लकड़ी डालने पर कभी भी शांत नहीं होती बल्कि और भड़क उठती है। गुरु नानक साहिब कहते हैं कि सारे संसार का धन भी लालची के मन की भूख को नहीं मिटा सकता:

भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार[1] ॥ (14)

सूफ़ी संत सरमद लोभ को ख़्वारी या दुर्दशा का कारण बताते हैं। वे कहते हैं कि लोभी व्यक्ति ज़हरीले साँपों से ज़्यादा ख़तरनाक है:

---

1. अर्थात् सभी लोकों की धन-दौलत।

सरमद, तू ज़ि ख़लक़ हेच यारी मतलब,
अज़ शाख़े-बरहना, साया दारी मतलब।
इज़्ज़त ज़ि क़नाअत अस्त ओ ख़्वारी ज़ि तमअ,
बा इज़्ज़ाते-ख़्वेश बाश, ख़्वारी मतलब। (15)

अर्थात् ऐ सरमद, तू दुनिया से सच्चे प्यार की उम्मीद न कर। बिना पत्तों का पेड़ किसी को भी साया नहीं दे सकता। लोभ से अपमान और संतोष से सम्मान प्राप्त होता है। सम्मान से जी, अपमान की ज़िंदगी का तलबगार न बन:

दुनिया तलबां रा किह् गमे-दीनार अस्त,
बे मिहरी-ए-शान ब यकद गर बिस्यार अस्त।
अज़ अक़रब-ओ-मार, हेच अंदेशा मकुन,
ज़ीं क़ौम हज़र बकुन किह् नेश-ओ-ख़ार अस्त! (16)

अर्थात् दुनिया के मतवाले सोने-चाँदी के लिए तड़पते हैं और एक दूसरे से दुश्मनी करने के लिए मशहूर हैं। तू साँपों और बिच्छुओं से न डर लेकिन इन माया के प्रेमियों से डर, जिनके अंदर ज़हर और काँटे भरे पड़े हैं।

गुरु अर्जुन देव जी फ़रमाते हैं कि लोभी सदा लोभ की लहरों में डोलता रहता है। वह योग्य-अयोग्य, भला-बुरा नहीं देखता। वह प्यारे मित्रों, सगे-संबंधियों, पूजा के योग्य माता-पिता तथा अपने इष्ट को लूटने में भी लज्जा नहीं करता:

हे लोभा लंपट संग सिरमोरह अनिक लहरी कलोलते[1]॥
धावंत जीआ बहु प्रकारं अनिक भांत बहु डोलते॥

---

1. **हे...कलोलते**=हे लोभ, तूने बड़े-बड़े शिरोमणि पुरुषों को फँसाया है और वे तेरी अनेक लहरों में क्रीड़ा कर रहे हैं।

नच[1] मित्रं नच इसटं नच बाधव नच मात पिता तव लजया॥
अकरणं करोत अखाद्य खाद्यं[2] असाज्यं साज समजया[3]॥
त्राहे त्राहे सरण सुआमी बिग्याप्त[4] नानक हर नरहरह[5]॥ (17)

जैसे-जैसे मनुष्य की इच्छाएँ पूरी होती जाती हैं वैसे ही वे और बढ़ती जाती हैं, उसे कभी तृप्ति नहीं मिलती। तृप्ति केवल संतोष में ही है। संतोष के बिना न कोई तृप्त हो सकता है और न ही किसी का परमार्थ बन सकता है:

सहस खटे लख कउ उठ धावै[6]॥ त्रिपत न आवै माइआ पाछै पावै॥
अनिक भोग बिखिआ के[7] करै॥ नह त्रिपतावै खप खप मरै॥
बिना संतोख नही कोऊ राजै[8]॥ सुपन मनोरथ ब्रिथे[9] सभ काजै॥ (18)

इसका यह अर्थ नहीं कि गुरु साहिबान अथवा संत-महात्मा लोगों को आजीविका कमाने अथवा सांसारिक उन्नति करने से रोकते हैं। संत किसी की उन्नति या किसी के फलने-फूलने के विरुद्ध नहीं होते। वे तो केवल यही आग्रह करते हैं कि आर्थिक और सांसारिक उन्नति सच्चाईपूर्ण और नेक उपायों द्वारा करनी चाहिए और हमेशा मेहनत, सत्य और ईमानदारी से काम लेना चाहिए।

संत-महात्मा लोगों को धन और माया के लोभ के प्रति इसलिए होशियार करते हैं कि सांसारिकता या माया, उन पर हावी न हो जाए और वे संसार में आने के प्रभुप्राप्ति के असली उद्देश्य को न भूल जाएँ।

दो तरह की वृत्ति

गुरु नानक साहिब ने *आसा की वार* में एक ओर तो सांसारिक वृत्ति वाले असंतोषी विकारी पुरुष का नक़्शा खींचा है जो बुरे कर्मों में प्रवृत्त

---

1. न करने योग्य कार्य करता है। 2. न खाने योग्य चीज़ें खाता है।
3. **असाज्यं**...**समजया**=न बनाने योग्य वस्तुओं को बनाता तथा इकट्ठा करता है।
4. विनती करता हूँ। 5. नरहरि, परमात्मा। 6. **सहस**...**धावै**=हज़ार इकट्ठा कर लेने पर लाख के पीछे दौड़ता है। 7. विषयों के। 8. तृप्त होता। 9. व्यर्थ।

होकर अपने जीवन को बरबाद कर देता है और मौत के बाद यातनाएँ पाता है, दूसरी ओर सच्ची मेहनत तथा नेक कमाई करनेवाले ऐसे संतोषी जीव का चित्र प्रस्तुत किया है जो सतगुरु द्वारा खींची हुई लकीर के अंदर रहता है तथा अकालपुरुष या परमपिता परमात्मा की भक्ति करके सदा के लिए उससे मिलाप प्राप्त कर लेता है। सांसारिक तथा भोगी व्यक्ति की अवस्था का वर्णन करते हुए आप फ़रमाते हैं:

आपीन्है भोग भोग कै होए भसमड़ भउर सिधाइआ[1]॥
वडा होआ[2] दुनीदार गल संगल[3] घत चलाइआ॥
अगै करणी कीरत वाचीऐ बह लेखा कर समझाइआ[4]॥
थाउ न होवी पउदीई[5] हुण सुणीऐ किआ रूआइआ॥
मन अंधै जनम गवाइआ॥ (19)

आप संतोषी और धर्मात्मा पुरुष का वर्णन इस प्रकार करते हैं:

सेव कीती संतोखीईं जिन्ही सचो सच धिआइआ॥
ओन्ही मंदै पैर न रखिओ[6] कर सुक्रित[7] धरम कमाइआ॥
ओन्ही दुनीआ तोड़े बंधना अंन पाणी थोड़ा खाइआ॥
तूं बखसीसी अगला[8] नित देवह चड़ह सवाइआ[9]॥
वडिआई[10] वडा पाइआ[11]॥ (20)

साधक का असली संघर्ष ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों के साथ है और बेईमानी की कमाई विकारों की जड़ है। जब अनुचित

---

1. **भसमड़**...**सिधाइआ**=शरीर जलकर भस्म की ढेरी हो जाता है और आत्मा प्रस्थान कर जाती है। 2. मर गया। 3. गले में ज़ंजीरें। 4. **अगै**...**समझाइआ**=आगे (मृत्यु के बाद) उसके कर्मों का विवरण उसे सुनाया जाता है तथा उसके अनुसार आगे का जीवन लिखा जाता है। 5. **थाउ**...**पउदीई**=यमदूतों की मार पड़ते समय कहीं स्थान नहीं मिलता अर्थात् सहारा नहीं मिलता। 6. **ओन्ही...रखिओ**=वे ग़लत रास्ते पर नहीं गए। 7. नेक कमाई। 8. **तूं...अगला**=तू उन्हें और अधिक देता है। 9. **चड़ह सवाइआ**=बढ़ती रहती है। 10. प्रभु की दया से। 11. प्रभु को प्राप्त कर लेता है।

ढंग से धन प्राप्त किया जाता है, तो ऐसे धन के साथ ऐब और पाप अपने आप ही आ जाते हैं। कोई विरला भाग्यशाली जीव ही उनसे बच सकता है। ये विषय-विकार, ऐब और पाप, जीवों को गिराने तथा उनकी रूहानी उन्नति को नष्ट करने के लिए मन और माया द्वारा बिछाया गया एक ज़बरदस्त जाल है। इसके विपरीत, हक़-हलाल की कमाई सब्र, संतोष, सहनशीलता तथा प्रभु की रज़ा अथवा मौज को स्वीकार करने की भावना पैदा करती है। यह जीव को मन और माया की टेक त्यागकर परमात्मा की शरण में आने का बल प्रदान करती है। जो लोग बेईमानी द्वारा पैसा इकट्ठा करने में अपनी चतुराई या लियाक़त समझते हैं, वे असल में रेत की दीवारें खड़ी कर रहे हैं। परमार्थी की बुद्धिमानी, योग्यता और चतुराई तो नेक कमाई में ही है, क्योंकि जो लोग बाहर दुनियावी लोभ से ऊपर नहीं उठ सकते, वे अंदर मन और माया के अनेक धोखों और प्रलोभनों का भी सामना नहीं कर सकेंगे।

आंतरिक रूहानी मार्ग में ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ परमार्थी की शक्ति नष्ट करने के लिए अनेक प्रकार के लालच और प्रलोभन देती हैं। जो लोग बाहर के प्रलोभनों के सामने दृढ़ नहीं रहते, वे अंदर के प्रलोभनों का भी मुक़ाबला नहीं कर सकते। पराए धन तथा अनीति या हेर-फेर की कमाई का लोभ जीव को रूहानियत की बादशाहत से दूर रखने के लिए माया द्वारा खड़ा किया गया चतुर ठग है। इसलिए परमार्थी को इससे हमेशा सावधान रहना चाहिए।

सच्चे अभ्यासी को इस भ्रम से निकलने का यत्न करना चाहिए कि दान-पुण्य आदि जैसे शुभ कर्म पापों को धो सकते हैं। कबीर साहिब ऐसे व्यक्ति की वृत्ति पर आश्चर्य प्रकट करते हैं जो अहिरन की चोरी करके सूई का दान देता है और फिर आशा करता है कि ऐसे दान के फलस्वरूप भगवान मिल जाएँ:

अहिरन[1] की चोरी करै, करे सूई का दान।
ऊँचा चढ़ि कर देखता, केतिक दूर विमान॥ (21)

1. वह लोहा जिस पर लोहार लोहे को पीटता है।

गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं कि लोग पहले चोरी, ठगी, धोखा, हेरा-फेरी आदि द्वारा पराया धन इकट्ठा करते हैं और बाद में पिता, दादा आदि के निमित्त दान-पुण्य, हवन, यज्ञ, श्राद्ध आदि करते हैं। परंतु वे यह नहीं जानते कि प्रभु की दरगाह में यह चोरी और अनीति का धन पहचान लिया जाएगा और उन्हें पुण्य के फल के स्थान पर सज़ा भोगनी पड़ेगी। गुरु साहिब स्पष्ट करते हैं कि प्रभु की दरगाह में केवल हक़-हलाल की कमाई में से दिए दान का शुभ फल मिलता है; चोरी, ठगी तथा बेईमानी की कमाई में से किए गए अथवा मृत्यु के बाद दूसरों द्वारा किए गए दान-पुण्य आदि का नहीं:

जे मोहाका[1] घर मुहै घर मुह[2] पितरी दे॥
अगै[3] वसत सिञाणीऐ[4] पितरी चोर करे॥
वढीअह हथ दलाल के मुसफी एह करे[5]॥
नानक अगै सो मिलै जे खटे घाले दे॥ (22)

परमेसुर थैं डरिये रे

संत दादू दयाल जी ने आजीवन धुनिये का व्यवसाय करते हुए ईमानदारी के साथ अपना निर्वाह किया और साथ ही परमार्थ की साधना की। आप शिष्यों और अभ्यासियों को उपदेश देते हैं कि मनुष्य को अपने कर्मों का लेखा अवश्य देना पड़ता है, इसलिए हर बुरे कर्म से बचना चाहिए। लेन-देन और व्यवहार में सच्चाई और नीयत साफ़ होनी चाहिए। इस नियम को तोड़ना ज़हर पीने के समान है जिससे मनुष्य की रूहानियत नष्ट हो जाती है:

डरिये रे डरिये, परमेसुर थैं डरिये रे।
लेखा लेवै भरि भरि देवै, ता थैं बुरा न करिये रे॥

---

1. चोर। 2. (किसी के) घर में चोरी करे। 3. परलोक में। 4. चोरी की वस्तु पहचान ली जाएगी। 5. **वढीअह**...**करे**=यह न्याय किया जाएगा कि कर्म करवाने वाले पंडित के हाथ काटे जाएँगे।

साचा लीजी साचा दीजी, साचा सौदा कीजी रे।
साचा राखी झूठा नाखी, बिष ना पीजी रे[1]॥ (23)

संत दरिया साहिब (बिहारवाले) पराए माल के लिए ललचानेवाले को चेतावनी देते हैं कि जो मनुष्य कई उपायों द्वारा पराया माल हथिया लेता है और लाखों का स्वामी बन जाता है, मौत के समय उससे वह माल छिन जाता है और उसे यमदूतों के हाथों यातनाएँ सहनी पड़ती हैं:

बहु बिधि माल बिरानी हरिया पैसा लाख बटोरै।
जाकर माल तें छीनि लीन्हौ घैंचन लागे कोरै। (24)

साईं बुल्लेशाह पराया हक़ छीननेवाले को सावधान करते हैं कि ऐसा करके वह कर्मों का भारी बोझ इकट्ठा कर रहा है। क्या वह नहीं जानता कि उसे दोबारा जन्म लेकर यह क़र्ज़ चुकाना पड़ेगा? इस तरह वह मनुष्य-जीवन की अनमोल बाज़ी जुए में हार रहा है और लाखों का खेत व्यर्थ ही लुटा रहा है:

हक पराया जातो नाहीं,
खा कर भार उठावेंगा।
फेर ना आकर बदला देसें,
लाखी[2] खेत लुटावेंगा।
दाअ[3] ला के विच जग दे जूए,
जित्ते दम हरावेंगा। (25)

आप उन लोगों को धिक्कारते हैं जो ईश्वर से क्षमा माँगकर और सूदख़ोरी से तोबा करके फिर सूदख़ोरी करते हैं, या जो अपनी धर्मपुस्तकों की क़समें खाकर कहते हैं कि आगे से पराया माल नहीं हथियाएँगे, लेकिन मौक़ा तलाश करके उसे फिर हथिया लेते हैं:

---

1. त्याग दो। 2. लाखों का; बहुमूल्य। 3. दाव।

नित्त पढ़ना एं इसतग़फ़ार[1]
कैसी तौबा है एह यार?

सावें दे के लवें सवाई,
वाधयां दी तूं बाज़ी लाई।
मुसलमानी एह किथों आई,
नित्त पढ़ना एं इसतग़फ़ार
कैसी तौबा है एह यार।

जित्थे ना जाना ओथे जाएं,
माल पराया मुँह धर खाएं।
कूड़ किताबां सिर ते चाएं,
एह तेरा इतबार।
नित्त पढ़ना एं इसतग़फ़ार
कैसी तौबा है एह यार।(26)

गुर पीर हामा ता भरे

बाइबल में पराया हक़ छीनने की मनाही की गई है। सेंट पॉल ने अपने एक पत्र में लिखा है: सबको उनका हक़ दो। जिनके टैक्स तुम्हारे ज़िम्मे हैं, उन्हें टैक्स दो, और जिनका लगान देना है उन्हें लगान दो।(27) मज़दूरों का हक़ छीननेवाले को इस प्रकार चेतावनी दी गई है—'देखो उन मज़दूरों की ओर जिन्होंने तुम्हारे खेत काटे हैं और जिनकी मज़दूरी तुमने धोखे से छीन ली है। वे पुकार करते हैं और उनकी चीख़ें मालिक तक पहुँच गई हैं (अर्थात् परमात्मा उनकी पुकार अनसुनी नहीं कर सकता और तुम्हें सज़ा देगा)।'(28)

दस धर्मादेशों (टेन कमांडमेंट्स) में से एक यह है: तुम चोरी नहीं करोगे।(29) एक अन्य कमांडमेंट के अनुसार: पड़ोसी की किसी भी चीज़ की इच्छा करना तक मना है।(30)

---

1. ईश्वर से पापों की क्षमा याचना करना।

क़ुरान शरीफ़ में भी कहा गया है कि एक-दूसरे का धन धोखे से मत छीनो और न हाकिमों को रिश्वत दो।[31] एक अन्य स्थान पर फ़रमाया गया है: जब तोलने लगो, पूरा तोलो और ठीक तराज़ू से तोलो।[32]

असल में पराए धन और अनुचित ढंग से कमाए धन का लालच इतना प्रबल होता है कि साधारण जीव तो क्या, कई परमार्थी पुरुष भी इसके लोभ से नहीं बच पाते। हम सोचते हैं कि पैसा जिस तरह से भी कमाया जा सके, कमा लें और फिर थोड़ा-बहुत साधसंगत की सेवा में ख़र्च कर दें, जिससे अपने आप ही सब कुछ ठीक हो जाएगा। यह ठीक है कि न देने से देना अच्छा है, क्योंकि इससे धन का मोह घटता है, कमाई सफल होती है, विषय-विकार, बीमारी, मुक़द्दमे आदि में लगनेवाला धन नेक काम में लगता है, धीरे-धीरे नेक कमाई करने की प्रेरणा और शक्ति मिलती है और जीव ग़लत मार्ग से हटकर ठीक मार्ग की ओर प्रवृत्त होता है। परंतु जो लाभ नेक और पवित्र कमाई में से परमार्थ में लगाए धन का होता है, उसका मुक़ाबला नहीं किया जा सकता। हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी कहा करते थे कि सत्संगी भजन-सिमरन चाहे कम करे, लेकिन बुरे कर्मों, बेईमानी की कमाई तथा धोखे और छल से ज़रूर बचे, क्योंकि भजन की कमी किसी न किसी समय पूरी हो सकती है, परंतु ठगी, छल, कपट और बेईमानी तो परमार्थ की जड़ ही काट देते हैं और पराए धन का हिसाब चुकाने के लिए जीव को दोबारा जन्म भी लेना पड़ सकता है। गुरु नानक साहिब ने पराए हक़ को छीनना हिंदुओं के लिए गाय तथा मुसलमानों के लिए सूअर का मांस खाने के समान बताया है। आप फ़रमाते हैं कि प्रभु की दरगाह में सतगुरु अपने शिष्य का पक्ष तभी लेते हैं, तभी उसकी हिमायत करते हैं यदि वह उनकी खींची हुई लकीर में रहता है और मुरदार, यानी पराए धन से बचता है:

हक पराइआ नानका उस सूअर उस गाय॥
गुर पीर हामा ता भरे जा मुरदार न खाए॥[33]

सिक्ख इतिहास बताता है कि गुरुघर द्वारा दशमांश जमा करने के लिए नियुक्त मसंद[1]—जिनको शुरू में उनके प्रेम, श्रद्धा और सेवा-भाव के लिए मसंद बनाया जाता था—समय बीतने के साथ ख़ुद इस दशमांश का उपभोग करने लगे। परिणामस्वरूप उनका आचरण गिर गया, उनकी शिष्य होने की ऊँची और पवित्र भावना जाती रही और वे अनेक प्रकार की कुरीतियों के शिकार भी हो गए। हालत यहाँ तक पहुँच गई कि गुरु गोबिन्द सिंह जी को उनके विरुद्ध बहुत कठोर क़दम उठाने पड़े और उनके साथ हर प्रकार का मेलजोल और लेन-देन बंद करना पड़ा। वास्तव में सेवा या भेंट के धन का सही उपयोग भी कोई पूर्ण महात्मा ही कर सकता है। कबीर साहिब फ़रमाते हैं:

गुरु बिनु माला फेरता, गुरु बिनु करता दान।
गुरु बिनु सब निस्फल गया, बूझौ बेद पुरान॥ (34)

दान विवेकपूर्वक देना चाहिए। ऐसे लोगों को दान देना उचित नहीं है, जो दान से प्राप्त धन को शराब आदि में ख़र्च करते हैं। ऐसा दान जीव के बंधन का कारण बनता है, परंतु परमात्मा के साथ अभेद हो चुके महात्माओं के सुझाव के अनुसार लोकहित में लगाया गया धन परमार्थ में सहायक होता है। गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं:

तन मन धन सभ सउप गुर कउ हुकम मंनिऐ पाईऐ॥ (35)

गुरुमत पूर्ण ज्ञानी सतगुरु के बताए मार्ग और आदेश पर चलने का नाम है। यह सिद्धांत पूर्ण गुरु के शिष्य की संपूर्ण रहनी पर लागू होता है और दान-पुण्य आदि का विषय भी इसमें शामिल है। प्रसिद्ध आध्यात्मिक कवि भाई गुरदास जी फ़रमाते हैं:

गुरसिखी दा करमु एहु गुर फुरमाए गुर सिख करणा। (36)

---

1. आमदनी का दसवाँ भाग इकट्ठा करनेवाला अधिकारी।

पंडित, पुरोहित, महंत, भाई, मुल्ला, पादरी तथा मंदिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों, सत्संग घरों आदि के प्रबंधक भी इस भ्रम का शिकार हो जाते हैं कि दान का धन ऐश, आराम और विलास का बहुत आसान साधन है। इस भावना को जितनी जल्दी त्याग दिया जाए, अच्छा है। कबीर साहिब फ़रमाते हैं कि गृहस्थ और दुनियादार लोग अनेक कामनाएँ मन में रखकर दान देते हैं। साधु कहलानेवाले जो लोग समझते हैं कि वे इस पराए धन को हज़म कर लेंगे वे अपने आप को धोखा दे रहे हैं:

गिरही का टुकड़ा बुरा, दो दो आँगुल दाँत।
भजन करै तो ऊबरे, नातर काढ़ै आँत॥ (37)

गुरु गोबिन्द सिंह के विषय में प्रसिद्ध है कि उन्होंने एक बार सेवा और भेंट का बहुत-सा धन नदी में फिंकवा दिया लेकिन अपने ज़रूरतमंद शिष्यों को नहीं दिया। कारण पूछे जाने पर आपने फ़रमाया कि चढ़ावे का धन ज़हर के समान होता है, शिष्य सतगुरु के बेटे-बेटियों के समान होते हैं और कोई भी पिता अपने बच्चों को ज़हर नहीं खिला सकता।

गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं कि योगी लोग घर-घर भिक्षा माँगते फिरते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि इस तरह प्राप्त किए हुए पैसे-पैसे और दाने-दाने का हिसाब देना पड़ता है। पहले तो दुनिया का कथित त्याग कर देना और फिर उसी दुनिया के आगे हाथ फैलाना, न बुद्धिमत्ता की निशानी है, न योग की। गुरु साहिब कहते हैं कि घर-घर माँगने का नाम योग या फ़क़ीरी नहीं है। जो लोग पराए धन और दान पर निर्भर रहते हैं, वे मनुष्य-चोले और साधु के भेष, दोनों पर दाग़ लगाते हैं। सांसारिक आशा-तृष्णा से ऊपर उठकर केवल नाम की याचना करनेवाले ही सच्चे साधु और फ़क़ीर होते हैं और वे ही अपने मनुष्य-जन्म को सफल करते हैं:

जोगी होवा जग भवा घर घर भीखिआ लेउ॥
दरगह लेखा मंगीऐ किस किस उतर देउ॥ (38)

दरवेसी को जाणसी विरला को दरवेस॥
जे घर घर हंढै[1] मंगदा धिग जीवण धिग वेस॥
जे आसा अंदेसा तज रहै गुरमुख भिखिआ नाउ[2]॥
तिस के चरन पखालीअह[3] नानक हउ बलिहारै जाउ॥ (39)

दादू साहिब फ़रमाते हैं कि परमात्मा के सच्चे भक्त न तीर्थ-स्थानों और वनों में जाकर रहते हैं, न व्रत आदि बहिर्मुखी क्रियाओं में उलझते हैं और न कभी भीख माँगते हैं। वे संसार से कोई आशा नहीं रखते:

तीरथ बरत न बनखंड बासा। माँगि न खाइ नहीं जग आसा॥ (40)

पलटू साहिब बड़े ज़ोरदार शब्दों में कहते हैं कि जिन ब्राह्मणों और पंडों ने वेदों और पुराणों का टीका करके लोगों को समझाने के बहाने अपनी दुकान चला रखी है, वे बाहर से तो बड़े धर्मात्मा दिखाई देते हैं, पर वास्तव में उनका मन माया के हाथों बिका हुआ है:

बेद पुरान पंडित बाँचै, करता अपनी दूकान है जी।
अरथ को बूझि के टीका करै, माया में मन बिकान है जी॥ (41)

हंस चुगैं न घोंघी

संतों के जीवन का चित्रण करते हुए पलटू साहिब उनकी ऊँची रहनी की ओर संकेत करते हुए फ़रमाते हैं कि संतों का जीवन धीरज, सब्र, संतोष से परिपूर्ण होता है। उनके मन में दुनिया की कोई चाह नहीं होती। जिस प्रकार हंस कभी घोंघे नहीं चुगते और शेर कभी घास नहीं खाते, उसी प्रकार संतजन कभी भिक्षा नहीं माँगते:

---

1. फिरता है, भटकता है। 2. नाम की भिक्षा। 3. धोइए।

सोई संत होइ जाय रहै जो ऐसी रहनी।
मुख से बोलै साच करै कछु उज्जल करनी॥
.....
मन में करै सँतोष तनिक ना कबहूँ लागै॥ (42)

भीख न माँगैं संत जन कहि गये पलटूदास।
हंस चुगैं ना घोंघी सिंह चरैं न घास॥ (43)

पलटू साहिब ने आटे-दाल की दुकान करके निर्वाह किया, कभी किसी के आगे हाथ नहीं फैलाए और न किसी से कोई भेंट स्वीकार की।

हज़रत सुलतान बाहू ने भी विद्वानों और हाफ़िज़ों की आलोचना करते हुए कहा है कि वे अपनी विद्वत्ता पर गर्व तो बहुत करते हैं, लेकिन उसे गली-गली बेचते फिरते हैं। उनके लोक और परलोक दोनों नष्ट हो जाते हैं:

पढ़ पढ़ आलिम करन तकब्बर[1], हाफ़िज़[2] करन वडाई हू।
गलियां दे विच फिरन निमाणे, बग़ल किताबां चाई हू।
जित्थे वेखण चंगा चोखा, पढ़न कलाम सवाई हू।
दोहीं जहानीं मुट्ठे[3], जिन्हां खाधी वेच कमाई हू। (44)

स्पष्ट है कि धर्मपुस्तकों के ज्ञान को इस तरह रोज़ी का साधन बना लेना संत-महात्माओं की दृष्टि में हक़-हलाल की कमाई नहीं है। लोगों से पैसे लेकर उनके लिए ऊँचे स्वर में किसी धर्मग्रंथ का पाठ करना या उसकी व्याख्या करना तो उन्हें धोखा देना है, लूटना है, क्योंकि इससे उन्हें कोई पुण्य-लाभ नहीं होता। इस प्रकार की अपवित्र कमाई भीख की कमाई या पराया धन छीनकर की गई कमाई से बेहतर नहीं है।

---

1. घमंड। 2. जिन्हें क़ुरान ज़बानी याद हो। 3. ठगे गए, लूटे गए।

नाम बेचकर अपनी रोज़ी कमाने की भी संतों ने सख़्त मनाही की है। नाम दिया जाता है, इसे बेचा नहीं जाता। हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी सत्संग में अक्सर फ़रमाया करते थे कि नाम की दौलत संतों को मुफ़्त मिलती है और वे उसे मुफ़्त ही देते हैं। गुरु नानक देव जी फ़रमाते हैं कि जो नाम को बेचते हैं, उनके जीवन को धिक्कार है। उनकी परमार्थ की खेती उजड़ जाती है और अंत समय में साथ ले जाने के लिए उनके पास कुछ भी नहीं रह जाता। सच्चे श्रम के बिना परमात्मा की दरगाह में कभी मान प्राप्त नहीं होता:

धिग तिना का जीविआ जे लिख लिख वेचह नाउ॥
खेती जिन की उजड़ै खलवाड़े किआ थाउ[1]॥
सचै सरमै[2] बाहरे अगै लहहे न दाद[3]॥ (45)

स्पष्ट है कि गुरु नानक देव जी के अनुसार नाम का बेचना मेहनत करना नहीं है। इसे नेक या हक़-हलाल की कमाई नहीं कहा जा सकता। कुछ लोग परमार्थ का मार्ग बताने, सत्संग करने तथा नाम देने के बदले जिज्ञासुओं से भेंट, दक्षिणा, फ़ीस आदि लेते हैं। परंतु सच्चे संत-महात्माओं ने ऐसी कमाई को निंदा योग्य कहा है। ऐसे लोग अपनी आध्यात्मिक प्राप्ति तो खो ही बैठते हैं, उनके अनुयायी भी ऐसे गुरुओं से कोई लाभ प्राप्त नहीं करते।

महान सूफ़ी दरवेश बाबा फ़रीद के बारे में सभी जानते हैं कि उनका जीवन सादगी, पवित्रता, सब्र और संतोष का जीता-जागता दृष्टांत है। आपके शिष्य जंगल में से लकड़ियाँ काटकर अपना गुज़ारा किया करते थे। आपने अपने शिष्यों को कठोर हिदायत दी हुई थी कि अगर लंगर में किसी चीज़ की कमी आ जाए तो उसके बिना गुज़ारा कर लेना, लेकिन

---

1. **खलवाड़े**...**थाउ**=उनके खेत में फ़सल का ढेर नहीं लग सकता। 2. श्रम।
3. **अगै**...**दाद**=प्रभु की दरगाह में उसकी कोई क़द्र नहीं होगी।

किसी के आगे हाथ न फैलाना। आप दूसरों पर निर्भर होने के बजाय मौत को बेहतर समझते थे।

फरीदा बार पराइऐ बैसणा सांई मुझै न देह॥
जे तू एवै रखसी जीउ सरीरहो लेह॥ (46)

अर्थात् ऐ मालिक, मुझे अपनी इच्छा पूरी करने के लिए पराए दर पर न जाना पड़े; इससे अच्छा तो यह होगा कि मुझे मौत दे दे।

आप फ़रमाते हैं कि अपनी कमाई से मनुष्य को यदि सादा या मामूली खाना मिले तो भी उसे संतुष्ट रहना चाहिए, दूसरों के स्वादिष्ट भोजन को देखकर ललचाना नहीं चाहिए:

रुखी सुखी खाए कै ठंढा पाणी पीउ॥
फरीदा देख पराई चोपड़ी ना तरसाए जीउ॥ (47)

एक बार एक फ़क़ीर साईं शरफ़ुद्दीन ने हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी की सेवा में बड़ी दीनता के साथ नामदान के लिए प्रार्थना की। उसने गले में कफ़नी डाली हुई थी और वह लोगों के दान पर गुज़ारा करता था। हुज़ूर ने उसे नाम देने से इनकार कर दिया। उसके अर्ज़ करने पर हुज़ूर महाराज जी ने फ़रमाया, 'नाम के अभ्यास के लिए हक़-हलाल की कमाई ज़रूरी है। जो शख़्स अपनी रोटी आप नहीं कमाता उसे नाम देने से क्या फ़ायदा?' दूसरे दिन साईं ने कफ़नी उतार दी, साधारण कपड़े पहन लिए और कुल्हाड़ी लेकर लकड़ी काटने का काम शुरू कर दिया। इस पर हुज़ूर ने उसे नाम देकर अपनी संगत में शामिल कर लिया। हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी मौलाना रूम का वह कलाम अक्सर सुनाया करते थे जिसमें मौलाना ने फ़रमाया है कि ख़ुदा की इबादत के लिए हक़-हलाल की रोटी ज़रूरी है; हराम की रोटी से दु:ख और कष्ट पैदा होते हैं। हक़-हलाल की रोटी से इनसान में ख़ुदा का नूर पूरी ऊँचाई पर पहुँचता है। हक़-हलाल की रोटी से बंदगी का शौक़ और प्रभु से

मिलाप का पक्का इरादा पैदा होता है, प्रभु का ज्ञान और बोध पैदा होता है; इससे हृदय में कोमलता और प्रभुप्रेम उत्पन्न होता है। जिस रोटी से तुझे अपने अंदर ईर्ष्या, अज्ञानता और आलस्य पैदा होते दिखाई दें, उसे तू हराम की रोटी समझ।[1]

संतों के निजी वृत्तांत

एक नहीं, अनेक पूर्ण संतों के उपदेश तथा उनके जीवन के वृत्तांत हमारे सामने हैं। संत नामदेव जी ने सारी उम्र कपड़े रँगकर और सिलकर अपना तथा अपने परिवार का गुज़ारा किया। संत रविदास जी ने जीवन भर जूतियाँ गाँठ-गाँठकर अपना निर्वाह किया, हालाँकि राजा पीपा तथा मेवाड़ की रानी मीराबाई आपके शिष्यों में से थे। एक बार मीराबाई एक क़ीमती हीरा ज़बरदस्ती आपकी झोंपड़ी में छोड़ती हुईं आपसे कह गईं कि इसे बेचकर आराम से ज़िंदगी बसर करें। आप यह जो जूतियाँ गाँठने का काम करके अपना गुज़ारा करते हैं, इसके कारण मुझे लोगों के ताने सुनने पड़ते हैं और बड़ी शर्म महसूस होती है। पर काफ़ी समय के बाद वह जब फिर अपने गुरुदेव से मिलने आईं तो देखा कि वही झोंपड़ी है और वही जूतियाँ गाँठने का काम जारी है। हीरा वहीं पड़ा था जहाँ वह रख गई थीं। उसे हैरान और दुःखी देखकर रविदास जी ने कहा कि बेटी! मुझे जो कुछ भी मिला है, जूतियाँ गाँठ-गाँठकर गुज़ारा करते हुए ही मिला है। अगर तुझे मेरे पास आने में शर्म महसूस होती है तो घर बैठे ही भजन-सिमरन कर लिया कर।

संत रविदास जी ने अपनी वाणी में नेक कमाई के विषय को कई पहलुओं से स्पष्ट किया है। सबसे पहले आप हमारे इस भ्रम को दूर करते हैं कि परमात्मा की भक्ति केवल घर-बार का त्याग करके जंगलों,

---

1. बहरे-ताअत लुक़्मए बायद हलाल, ता न अफ़ज़ायद तुरा रंजो-मलाल। (48)
लुक्मए क-आँ नूर अफ़ज़ूदो-कमाल, आँ बुवद आवर्दा अज़ कस्बे-हलाल। (49)
ज़ायद अज़ लुक्मा हलाल अन्दर दहाँ, मेले ख़िदमत अज़मे-रफ़्तन आँ जहाँ। (50)
इल्मो-हिकमत ज़ायद अज़ लुक़्मा हलाल, इश्को-रिक़्क़त ज़ायद अज़ लुक़्मा हलाल।
चूँ ज़ि लुक़्माए तू हसद बीनी दवाम, जिहलो-ग़फ़लत ज़ायद आँ रा दाँ हराम। (51)

पहाड़ों, गुफाओं आदि में छिपकर अथवा हठ-कर्मों के द्वारा ही की जा सकती है। आप फ़रमाते हैं कि जिस व्यक्ति को एक राम और दूसरे सच्चे श्रम पर भरोसा है, उसका जीवन सफल है। गृहस्थ में रहते हुए मनुष्य को नाम का अभ्यास करना चाहिए। घर को त्यागकर वन में भटकने का कोई फ़ायदा नहीं है, बल्कि नेक कमाई करते हुए घर में रहते हुए अभ्यास करने से घर बैठे ही प्रभु का मिलाप हो सकता है:

एक भरोसो राम को, अरु भरोसो सत्तकार[1]।
सफल होइहु जीवना, कहि 'रविदास' बिचार॥ (52)

ग्रहहिं रहहु सति करम करहु, हरदम चिंतहु ओंकार।
'रविदास' हमारो बांधला, हइ केवल नाम अधार॥ (53)

नेक कमाई जउ करहि, ग्रह तजि बन नहिं जाय।
'रविदास' हमारो राम राय, गृह मंहि मिलिंह आय॥ (54)

महाराज चरन सिंह जी अपने सत्संगों में कई बार समझाते थे कि घर-बार का त्याग कर देने से हमारे मन में मालिक की भक्ति का ज़्यादा शौक़ पैदा नहीं हो जाता और न ही इस प्रकार के त्याग द्वारा जीवन की मूल आवश्यकताएँ—रोटी, कपड़ा और सिर पर छत—ख़त्म हो सकती हैं। जंगल में भी पेट रोटी माँगता है, तन ढकने के लिए कपड़े की ज़रूरत पड़ती है और सिर पर किसी छत या छाया की। घर-बार त्यागकर हम अपना बोझ ख़ुद उठाने के बदले दूसरों पर या समाज पर डाल देते हैं।

संत नामदेव, संत रविदास, संत कबीर और गुरु नानक साहिब ने स्पष्ट रूप से समझाया है कि मनुष्य संसार का कामकाज करते हुए भी प्रभु के नाम का सिमरन कर सकता है। संत रविदास जी फ़रमाते हैं कि जो प्रेमी अपने हाथ कार्य की ओर तथा हृदय प्रभु की ओर लगाए रखता है, प्रभु स्वयं ऐसे भक्त के घर जा पहुँचते हैं।

---

1. सच्चा श्रम।

जिहवा भजै हरि नाम नित, हत्थ करहिं नित काम।
'रविदास' भए निहचिंत हम, मम चिंत करैंगे राम॥ (55)

जिहबा सों ओंकार जप, हत्थन सों कर कार।
राम मिलहिं घर आइ कर, कहि 'रविदास' बिचार॥ (56)

संत नामदेव जी भी कहते हैं कि मैं कपड़े रँगने और सीने में लगा रहता हूँ, परंतु प्रभु के नाम को एक क्षण के लिए भी नहीं भूलता:

रांगन रांगउ सीवन सीवउ॥ राम नाम बिन घरीअ न जीवउ॥ (57)

नामदेव जी अपने भक्त को समझाते हुए कहते हैं कि हे त्रिलोचन, हाथ-पैरों से श्रम करते हुए अपना चित्त परमपिता परमात्मा में लगाए रखो:

नामा कहै तिलोचना मुख ते राम संम्हाल॥
हाथ पाउ कर काम सभ चीत निरंजन नाल॥ (58)

पर धन पर दारा परहरी

नामदेव जी का कथन है कि जो व्यक्ति पराए धन और परायी स्त्री से दूर रहता है, परमात्मा उसके निकट बसता है:

पर धन पर दारा परहरी॥ ता कै निकट बसै नरहरी॥ (59)

यही बात पाँचवीं शताब्दी में लिखी, नीति-कथाओं की प्रसिद्ध संस्कृत पुस्तक पंचतंत्र में इन शब्दों में व्यक्त की गई है।

मातृवत्परदाशंस्तु परद्रव्याणि लोष्टवत्।
आत्मवत्सर्वभूतानि यः पश्यति स पश्यतिः॥ (60)

अर्थात् बुद्धिमान वही है जो परायी स्त्री को माता के समान, पराए धन को ढेले के समान तथा सब प्राणियों को अपने समान समझता हो।

शेर की तरह ज़ुल्म करके अपनी रोज़ी कमानेवाले व्यक्ति को नामदेव जी ने महाठग कहा है:

सिंघच भोजन जो नर जानै॥ ऐसे ही ठगदेउ बखानै॥ (61)

नेक कमाई

संतों ने यह विचार भी बलपूर्वक प्रकट किया है कि परिश्रम का जाति-पाँति से कोई संबंध नहीं है और कोई भी व्यवसाय छोटा या निम्न नहीं है। जिस भी सदाचारपूर्ण कार्य के द्वारा हम ईमानदारी के साथ अपनी जीविका कमा सकें, वही काम अच्छा है और रूहानी तरक्की में हमारी सहायता करता है। गुरु रविदास जी ने *सुकिरित* या नेक कमाई को इतना महत्त्व दिया है कि आपने सुकृत को ही सच्चा धर्म, सच्ची शांति का स्रोत और भवसागर से पार होने के लिए सरल तथा उत्तम साधन माना है। आप कहते हैं कि परमार्थ के प्रेमी को, श्रम को ही ईश्वर मानते हुए, नेक कमाई में लगे रहना चाहिए। ऐसा सुकृत, मनुष्य के रूहानी अभ्यास में सहायक होकर उसे प्रभुप्राप्ति के मार्ग पर दृढ़तापूर्वक चलने की प्रेरणा देता है:

'रविदास' हौं निज हत्थहिं, राखौं रांबी आर।
सुकिरित ही मम धरम है, तारैगा भव पार॥ (62)

स्रम कउ ईसर जानि कै, जउ पूजहि दिन रैन।
'रविदास' तिन्हहि संसार मंह, सदा मिलहि सुख चैन॥ (63)

परंतु आप स्पष्ट करते हैं कि केवल श्रम ही काफ़ी नहीं है, श्रम का नेक और पवित्र होना भी अत्यंत आवश्यक है। जिनके पास धर्म अथवा नीतिपूर्ण *श्रमसाधना* (हक़-हलाल की कमाई) और प्रभुभक्ति का दोहरा साधन होता है, उनकी कमाई और उनकी साधना फलीभूत होती है और उनका जीवन सफल होता है:

धरम करम दोइ एक हैं, समुझि लेहु मन माहिं।
धरम बिना जौ करम है, 'रविदास' न सुख तिस मांहि॥ (64)

'रविदास' स्रम करि खाइहि, जौ लौं पार बसाय।
नेक कमाई जउ करइ, कबहुं न निहफल जाय॥ (65)

प्रभ भगति स्रम साधना, जग मंह जिन्हहिं पास।
तिन्हहिं जीवन सफल भयो, सत्त भाखै 'रविदास'॥ (66)

गुरु साहिबान ने परिश्रम करने, नेक कमाई करने और नाम जपने के साथ-साथ अपने कमाए धन का बाँटकर उपभोग करने पर भी ज़ोर दिया है। अन्य कई धर्मों तथा धर्मपुस्तकों में अपनी नेक कमाई में से दशमांश परमार्थ में ख़र्च करने का उपदेश दिया गया है। जिस दयालु दाता ने सब कुछ दिया है, उसकी बख़्शी हुई कमाई में से कुछ अंश उसके निमित्त ख़र्च करना उसका शुक्राना अदा करने तथा उसके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने का एक ढंग है। इससे धन का मोह घटता है, कमाई सफल होती है, कर्मों का बोझ हलका होता है और परमार्थ में उन्नति होती है। कबीर साहिब फ़रमाते हैं कि यदि घर में पैसा बढ़ जाए तो यह लगभग ऐसा ही है जैसे नाव में पानी बढ़ जाता है तथा उसके डूबने का भय होता है। जिस प्रकार नाव में बैठा व्यक्ति दोनों हाथों से उलीचकर पानी बाहर निकालता है, इसी प्रकार बुद्धिमान व्यक्ति को भी चाहिए कि बढ़ते हुए धन में से मुक्त हस्त, ज़रूरतमंदों पर ख़र्च करे:

जो जल बाढ़ै नाव में, घर में बाढ़ै दाम।
दोऊ हाथ उलीचिये, यहि सज्जन कौ काम॥ (67)

दान देना अच्छा है। अपनी कमाई में से औरों को बाँटकर, उस कमाई का उपयोग करना अच्छा है, परंतु ऐसे दान तथा बाँटने का आधार नेकी और ईमानदारी की कमाई होनी चाहिए; धोखे, बेईमानी या लूट की कमाई नहीं।

संत नामदेव जी, रविदास जी, कबीर साहिब तथा गुरु साहिबान की मिसालें तो कुछ दूर की हैं, परंतु आज के समय में भी बाबा जैमल सिंह जी महाराज, हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी, सरदार बहादुर जगत सिंह जी महाराज तथा महाराज चरन सिंह जी की मिसालें हमारे सामने हैं। बाबा जैमल सिंह जी ने स्वामी जी महाराज से आगरा में नामदान प्राप्त किया। सतगुरु की दया-मेहर से थोड़े समय में ही आपको संत गति प्राप्त हो गई। आपने स्वामी जी महाराज से विनती की कि मैं बाक़ी सारा जीवन आपके चरणों में बिताना चाहता हूँ। स्वामी जी महाराज ने ख़ुद सारी उम्र हक़-हलाल की कमाई करते हुए साधसंगत की मुफ़्त सेवा की थी। आपने बाबा जी महाराज के सामने भी यही आदर्श रखते हुए फ़रमाया, 'सत्संगी को संसार में स्वार्थ और परमार्थ दोनों कमाने चाहिएँ। अगर त्याग में रहोगे तो पराया अन्न खाना पड़ेगा। माथा टेकने और सेवा करनेवाले तुम्हारी कमाई लूट लेंगे। अपने गुज़ारे के लिए अभ्यासी को कोई न कोई काम करना चाहिए। भजन-सुमिरन में तरक्की के लिए हक़-हलाल की कमाई से गुज़र करना ज़रूरी है।'(68) सतगुरु के आदेश का पालन करते हुए बाबा जी महाराज फ़ौज में भरती हो गए, बत्तीस साल तक फ़ौज में नौकरी करके अपना गुज़ारा किया तथा बाक़ी सारा जीवन अपनी पेंशन पर गुज़ारा करते हुए साधसंगत की सेवा में बिताया।

नेकी तथा हक़-हलाल की कमाई के विषय में बाबा जी महाराज एक पत्र में लिखते हैं:

> मनुष्य ने अपने हक़ की कमाई छोड़कर दूसरे का हक़ फ़रेब (धोखे) से खाना अच्छा समझा है, यह नहीं समझा कि जो मालिक ने मुझे दिया है, सो मेरे खाने के लिए दिया है, सो मैं नौ हिस्से ख़ुद खाऊँ और दसवाँ हिस्सा मेरा नहीं है, मेरे पैदा करनेवाले मालिक का है। मेरा उसके साथ क़रार (वायदा) है कि मैं अपनी कमाई में से दसवाँ हिस्सा मालिक को दूँगा, यह इस मनुष्य ने नहीं समझा है। ज्यों-ज्यों इसने

> बड़ाई पाई, त्यों-त्यों इसने अपने से जो छोटे या अदने थे, ज़ोर या ठगी से उनकी कमाई खाना अच्छा समझा, और अपनी कमाई या तो जमा की या फ़ुज़ूल ख़र्च कर दी। ऐसे बुरे कार्य करके जिनका खाया था उनका आगे जाकर ज़रूर चुकाना भी था। सो जन्म ले-लेकर वह चुकाया, ढोर, पशु, गधा बन-बनकर जी। इसलिए यह समझ लो कि अपनी हक़ की कमाई के सिवाय कभी किसी का नहीं खाना चाहिए। यह परमार्थ की पहली सीढ़ी है। चाहे सारी दुनिया का राजा हो, तब भी मनुष्य को अपने हक़ की, अपने हाथों कमाई करके खानी चाहिए। सो अपनी नौकरी, हक़ की कमाई करो। आप भी खाओ, औरों को भी दो, घरवालों को भी दो और यथाशक्ति साधसंगत को भी दो।(69)

इसी ऊँचे पवित्र आदर्श पर हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी सारी उम्र दृढ़तापूर्वक चलते रहे। आप फ़ौज के इंजीनियरिंग विभाग में सब-डिविज़नल अफ़सर थे। आपने पूरी लगन और मेहनत के साथ नौकरी करते हुए ईमानदारी की मिसाल क़ायम की और अपनी नेक कमाई में से खुले दिल से साधु-संतों की सेवा में धन ख़र्च किया। जब आप कोहमरी में नियुक्त थे तब आपका घर साधुओं और ज़रूरतमंदों की सेवा के लिए प्रसिद्ध था। बाबा जी महाराज से नामदान लेने के बाद अपनी कमाई में से जितना पैसा बाबा जी महाराज का हुक्म होता अपने तथा परिवार के ख़र्च के लिए रखकर बाक़ी सारा वेतन बाबा जी महाराज के पास साधसंगत की सेवा के लिए भेज देते थे। बाबा जी महाराज आपकी हक़-हलाल की कमाई संगत पर ख़र्च करके बहुत प्रसन्न होते थे। बाबा जी महाराज द्वारा महाराज सावन सिंह जी को लिखे पत्रों से पता चलता है कि डेरे में पहला कुआँ, शुरू-शुरू की कई इमारतें तथा स्वामीबाग़ आगरा में बाबा जी ने जो कमरे बनवाए, वे हुज़ूर की नेक कमाई से बने थे।

संत दूरदर्शी होते हैं। महाराज सावन सिंह जी ने बारवाले (मिंटगुमरी और लायलपुर का एक अंश) भाग में अच्छी उपजाऊ ज़मीन खरीदने के लिए बाबा जी महाराज से आज्ञा माँगी, परंतु बाबा जी महाराज ने आज्ञा नहीं दी। बाबा जी महाराज ने फ़रमाया कि तुम्हारी हक़-हलाल की कमाई है; यह बार कई बार बसी है और कई बार उजड़ी है। मैं तुमको ऐसे स्थान पर ज़मीन दिलवाऊँगा जहाँ से तुम्हें और तुम्हारे परिवार को कभी उजड़ना न पड़े तथा तुम्हारी पीढ़ियाँ आराम के साथ गुज़ारा करती हुई साधसंगत की सेवा कर सकें।

हुज़ूर महाराज जी ने फ़ौज की नौकरी से रिटायर होने के बाद सिरसा के नज़दीक ऐसी भूमि सस्ते भाव में ख़रीद ली, जहाँ उस समय सिर्फ़ रेत ही रेत थी। बाबा जी महाराज के वचनों का महत्त्व और भाव उस समय प्रकट हुआ जब बार का इलाक़ा पाकिस्तान में चला गया तथा सिरसा के इलाक़े में नहर पहुँचने के कारण वहाँ की धरती बहुत उपजाऊ साबित हुई।

हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी ने अपनी सरकारी नौकरी पर अपना तथा अपने परिवार का गुज़ारा किया तथा सेवा-निवृत्ति और गुरुपद को सँभालने के बाद, अपनी पेंशन तथा खेती की आमदनी से अपना तथा अपने परिवार का पालन-पोषण किया। आप जब तरनतारन जाते थे तो प्राय:, कोढ़ियों के आश्रम में जाकर कोढ़ियों को मिठाई बाँटते और आश्रम के लिए कुछ दान भी देते थे। हुज़ूर महाराज जी किसी से कुछ लेते नहीं थे, सिर्फ़ देना ही जानते थे। जिस प्रकार एक पिता अपने बच्चों को प्रेम के साथ ईनाम देता है, इसी प्रकार आपके दिए हुए रुपये कई सत्संगियों ने अभी तक प्यार के साथ सँभालकर रखे हुए हैं। सत्रह सितंबर, 1947 को असोज की संक्रांति (पहली तारीख़) का सत्संग था। सत्संग की समाप्ति पर हुज़ूर ने फ़रमाया, 'मैंने सारी उम्र अपनी हक़-हलाल की कमाई पर गुज़ारा करके बाबा जी महाराज के हुक्म की तामील की है। संगत का एक पैसा भी कभी अपने निजी काम में इस्तेमाल नहीं किया, बल्कि सत्संग से अपने निजी काम के लिए बतौर क़र्ज़ भी कभी

कुछ नहीं लिया। बाहर सत्संग करने जाने के लिए डेरे की मोटर का इस्तेमाल ज़रूर किया है, या हो सकता है कि कभी बाग़ से सब्ज़ी लेकर बीबी रली [1] ने बना ली हो। इन दोनों के लिए मैं संगत से माफ़ी माँगता हूँ। मुझे किसी से अगर कुछ लेना है तो वह छोड़ता हूँ। अगर किसी का मुझे कुछ देना हो तो वह बता दे और ले लेवे।' हुज़ूर ने फिर फ़रमाया, 'जिस किसी को मैंने कभी कुछ नर्म-गर्म कहा हो वह मुझे माफ़ कर दे।' सतगुरु के मुखारविंद से ये वचन सुनकर सारी संगत की आँखें भर आईं, क्योंकि यह एक प्रकार से सतगुरु की ओर से घोषणा थी कि वे अपना कार्य पूर्ण करके परमधाम जा रहे हैं।

एक दिन डेरे में हुज़ूर ने एक सेवादार, श्री गोपाल सिंह लट्ठा को चालीस रुपये दिए और फ़रमाया, 'कई साल पहले मेरे दफ़्तर में एक अर्दली था; उसने ये रुपये मेरे पास रखे थे। एक बार वह छुट्टी लेकर गया और फिर लौटकर नहीं आया। मैं उसका रास्ता देखता रहा। उसके रिश्तेदारों और वारिसों की बहुत तलाश की कि रुपया उसके बाल-बच्चों को दे दूँ, मगर कोई पता न चला। अब ये रुपये राय साहिब मुंशीराम (जो उस समय डेरे में सेक्रेटरी थे) को दे दो कि सेवा में जमा कर लें।'

सतगुरु हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी, जो महाराज सावन सिंह जी के पौत्र थे, बताते थे कि एक बार हुज़ूर बड़े महाराज जी ने आपको तथा आपके छोटे भाई सरदार पुरुषोत्तम सिंह को बुलाकर कहा, 'देखो बेटा, मैंने जब भी हाथ बढ़ाया है तो कुछ देने के लिए ही बढ़ाया है, कभी भी लेने के लिए हाथ नहीं फैलाया। तुम भी हमेशा इसी उसूल पर क़ायम रहना।'

सरदार बहादुर महाराज जगत सिंह जी राजकीय कृषि विद्यालय (लायलपुर) में वाइस प्रिंसीपल थे। आप अपने ख़र्च के लिए कुछ रुपये

---

1. बीबी रली निरंतर हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी तथा उनके परिवार की सेवा करती रहीं। हुज़ूर महाराज जी का खाना भी आप ही बनाती थीं।

रखकर अपने वेतन का बाक़ी सारा अंश ग़रीब विद्यार्थियों तथा ज़रूरतमंद रिश्तेदारों में बाँट देते थे। कई ग़रीब विद्यार्थियों को तो अपनी पढ़ाई के दौरान यह पता भी न लग सका कि हर महीने उनकी फ़ीस कौन दे रहा है। एक विद्यार्थी को तो आपने आगे पढ़ने के लिए अपने ख़र्च से विलायत तक भेजा। आपने सारी उम्र अपनी कमाई तथा पेंशन पर गुज़ारा करते हुए साधसंगत की मुफ़्त सेवा की।

सरदार बहादुर महाराज जगत सिंह जी के समय तक राधास्वामी सत्संग ब्यास की चल तथा अचल संपत्ति का काफ़ी विस्तार हो चुका था। सतगुरु महाराज चरन सिंह जी ने 1957 में 'राधास्वामी सत्संग ब्यास' नामक एक ट्रस्ट स्थापित करके लाखों रुपये की परमार्थी संपत्ति, जो संत-सतगुरु होने के नाते उनके निजी नाम पर थी, ट्रस्ट के नाम कर दी। अब इस प्रकार डेरे में आनेवाली सेवा, भेंट आदि सब ट्रस्ट में जमा होती है और डेरे के सतगुरु के नाम पर परमार्थी संपत्ति का एक पैसा भी नहीं है। ट्रस्ट की स्थापना से पहले भी डेरे के किसी संत-सतगुरु ने सेवा की राशि में से एक पाई भी कभी अपने लिए ख़र्च नहीं की थी।

सतगुरु के रूप में कार्यभार सँभालने से पहले महाराज चरन सिंह जी सिरसा में वकालत करते थे और बाद में आपका ख़र्च अपने निजी फ़ार्म की आमदनी से चलता रहा। सत्संग के प्रबंध के साथ निकट तथा दूर का संबंध रखनेवाले सभी सत्संगियों को इस बात का व्यक्तिगत ज्ञान है कि महाराज जी का अपना तथा अपने परिवार का ही नहीं, बल्कि कई सेवादारों का ख़र्च भी आपकी निजी आमदनी से होता था। इसके साथ ही आप हर साल भारी मात्रा में अनाज, गुड़, शक्कर आदि सामान, अपने फ़ार्म से लंगर की सेवा के लिए देते रहे तथा गुप्त रूप से भी कई प्रकार से सत्संगियों की तथा डेरे की आर्थिक सहायता करते रहे।

ऐसे महान संत-सतगुरुओं के ऊँचे रूहानी ज्ञान के साथ-साथ उनकी नेक तथा निर्मल रहनी, निष्काम सेवा तथा अनुपम ईमानदारी ने उन्हें आज के युग में देश-विदेश के बड़ी बारीक़ी से खोज-पड़ताल करनेवाले जिज्ञासुओं में लोकप्रिय बनाने में बहुत बड़ा योगदान दिया है।

मन मेरे भूले कपट न कीजै

संतमत का यह मूल सिद्धांत है कि जीव को जगत में बाँधकर रखनेवाली चीज़ उसके कर्म ही हैं और उसे दूसरों से ली हुई पाई-पाई का हिसाब देना पड़ता है। सरदार बहादुर महाराज जी फ़रमाया करते थे कि अगर अनाज का एक दाना भी पड़ोसी के खेत से आपके खलिहान में अनजाने में आ गया है तो उसका भी क़र्ज़ चुकाना पड़ेगा। जब अनजाने में होनेवाले कर्मों पर यह नियम लागू होता है तो जान-बूझकर की हुई चोरी, ठगी, धोखेबाज़ी, बेईमानी, हेरा-फेरी आदि का फल क्या होगा? कबीर साहिब कहते हैं कि हमारे संबंधी हमारी बेईमानी की कमाई खा-पीकर अपनी-अपनी राह चले जाते हैं और अपने किए कर्मों का लेखा हमें ख़ुद चुकाना पड़ता है:

> बहु परपंच कर पर धन लिआवै॥ सुत दारा पह आन लुटावै॥
> मन मेरे भूले कपट न कीजै॥ अंत निबेरा तेरे जीअ पह लीजै॥ (70)

सत्संगियों तथा जिज्ञासुओं को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि कर्म और फल का नियम अटल है और कर्मों का हिसाब रखनेवाली शक्ति इतनी होशियार और समर्थ है कि उसे कभी धोखा नहीं दिया जा सकता। कर्मों का हिसाब तो ऋषियों, मुनियों, अवतारों, पैग़ंबरों तक को चुकाना पड़ता है, साधारण मनुष्यों की तो हस्ती ही क्या है। गुरु अर्जुन देव जी कर्मों का हिसाब रखनेवाली इस अचूक शक्ति को चतुर बनिए, क़साई आदि के समान निर्दयी बताते हैं। आप कहते हैं कि जीव को उसके पाप-कर्मों की सज़ा के लिए बुरी तरह पीटा जाता है तथा तिलों के समान कोल्हू में पीसा जाता है। लोग समझते हैं कि धोखा, हेरा-फेरी, चोरी, ठगी आदि के द्वारा पराया धन हथियाते समय हमें कोई देख या सुन नहीं रहा है। परंतु हम यह नहीं जानते कि वह मालिक हमारे अंदर बैठा, हमारे प्रत्येक कार्य, प्रत्येक कर्म और करतूत को निरंतर देख रहा है। उसको हमारे ऐबों और पापों की सज़ा देने के लिए किसी वकील,

दलील या गवाह की ज़रूरत नहीं है और न ही उसके फ़ैसले के विरुद्ध किसी प्रकार की आपत्ति और अपील के लिए कोई गुंजाइश है:

पाप करेदड़ सरपर[1] मुठे[2]॥ अजराईल[3] फड़े फड़ कुठे॥
दोजक[4] पाए सिरजणहारै लेखा मंगै बाणीआ[5]॥
संग न कोई भईआ बेबा[6]॥ माल जोबन धन छोड वञेसा[7]॥
करण करीम न जातो करता तिल पीड़े जिउ घाणीआ॥
खुस खुस लैदा वसत पराई॥ वेखै सुणे तेरै नाल खुदाई[8]॥
दुनीआ लब पइआ खात[9] अंदर अगली गल[10] न जाणीआ॥
जम जम मरै मरै फिर जंमै॥ बहुत सजाए पइआ देस लंमै[11]॥
जिन कीता तिसै न जाणी अंधा ता दुख सहै पराणीआ॥ (71)

हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी अपने सत्संगों में गुरबानी के दो शब्द, हर *मंदर एह सरीर है गिआन रतन परगट होए॥* (72), हर *मंदर एह जगत है गुर बिन घोरंधार॥* (73) की व्याख्या करते हुए अक्सर फ़रमाते थे कि कहने को तो हम भी गुरु साहिबान के जैसे ही कह देते हैं कि परमात्मा हमारे अंदर बैठा है तथा संसार के पत्ते-पत्ते, कण-कण में व्याप्त है, परंतु हम यह नहीं सोचते कि हम कहते क्या हैं और करते क्या हैं। जिस दुकान पर पाँच साल का बच्चा बैठा हो हम वहाँ से दस पैसे की पेंसिल उठाने का साहस नहीं कर सकते। जिस खेत की रखवाली के लिए दस साल का बच्चा खड़ा हो, हम उसमें से एक ख़रबूज़ा तोड़ने का हौसला नहीं करते, परंतु उस परमात्मा को हाज़िर-नाज़िर कहते हुए दुनिया में हम कौन-कौन सी ठगी, चोरी, बेईमानी आदि बुरे कर्म नहीं करते।

---

1. ज़रूर, अवश्य। 2. लुट गए, बरबाद हुए। 3. मुस्लिम धर्मग्रंथों के अनुसार मौत का फ़रिश्ता, यमराज। 4. नरक। 5. अर्थात् धर्मराज जो कर्मों के लेखे के अनुसार न्याय करता है। 6. बहन। 7. चला जाता है। 8. **वेखै**...**खुदाई**=ख़ुदा तुम्हारे सभी कार्यों को देख और सुन रहा है। 9. खड्डे में। 10. अर्थात् आगे के जन्मों का अथवा मृत्यु के बाद का हाल। 11. जन्म-मरण के लंबे चक्र में।

आप फ़रमाते थे कि नाम की कमाई तो बहुत ऊँची और पवित्र बात है, यदि गुरु साहिब के उपदेश की केवल इतनी-सी बात ही हमारे हृदय में बैठ जाए कि वह कुलमालिक सचमुच हमारी हर करतूत को देख रहा है और हमें सचमुच ही अपने हर कर्म का फल भुगतना पड़ता है तो संसार की हालत ही बदल जाए, क्योंकि यह समझ लेने के बाद हम किसी प्रकार की हिंसा और बेईमानी, अन्याय और अनाचार की ओर जाने का विचार तक न कर सकेंगे। गुरु अर्जुन देव जी फ़रमाते हैं:

निकट बुझै सो बुरा किउ करै॥ (74)

अर्थात् जो व्यक्ति उस परमात्मा को अपने पास निरंतर मौजूद समझता है वह कोई भी अनुचित कार्य नहीं कर सकता।

हमें चाहिए कि नाम की कमाई के द्वारा अपने पिछले कर्मों का हिसाब चुकता करने का यत्न करें तथा आगे के लिए हक़-हलाल की, नेक कमाई तथा ईमानदारी से गुज़ारा करें, ताकि हमारे कर्मों का बोझ और अधिक न बढ़े।

संदर्भ सूची

(1) आदि ग्रन्थ, पृ. 718
(2) आदि ग्रन्थ, पृ. 467
(3) आदि ग्रन्थ, पृ. 951
(4) आदि ग्रन्थ, पृ. 471
(5) आदि ग्रन्थ, पृ. 471
(6) आदि ग्रन्थ, पृ. 1245
(7) कबीर साखी-संग्रह, पृ. 12-13
(8) कबीर साखी-संग्रह, पृ. 17
(9) कबीर साखी-संग्रह, पृ. 139
(10) सारबचन संग्रह, 16:1:43-44
(11) आदि ग्रन्थ, पृ. 417
(12) आदि ग्रन्थ, पृ. 1245
(13) आदि ग्रन्थ, पृ. 391-392
(14) आदि ग्रन्थ, पृ. 1
(15) रुबाईयात-ए-सरमद, रुबाई 25
(16) रुबाईयात-ए-सरमद, रुबाई 30
(17) आदि ग्रन्थ, पृ. 1358
(18) आदि ग्रन्थ, पृ. 278-279
(19) आदि ग्रन्थ, पृ. 464
(20) आदि ग्रन्थ, पृ. 466-467
(21) साखी-ग्रंथ, पृ. 264
(22) आदि ग्रन्थ, पृ. 472
(23) दादू दयाल की बानी, भाग 2, पृ. 153
(24) दरिया ग्रन्थावली, भाग 1, पृ. 153
(25) साईं बुल्लेशाह, पृ. 332
(26) साईं बुल्लेशाह, पृ. 51
(27) बाइबल
(28) बाइबल
(29) बाइबल, एक्सोडस, 20:15
(30) बाइबल, एक्सोडस, 20:17
(31) क़ुरान, 2:188
(32) क़ुरान, 17:35
(33) आदि ग्रन्थ, पृ. 141
(34) कबीर साखी-संग्रह, पृ.15
(35) आदि ग्रन्थ, पृ. 918
(36) वारां भाई गुरदास, 28:10
(37) साखी-ग्रंथ, पृ. 179
(38) आदि ग्रन्थ, पृ. 1089
(39) आदि ग्रन्थ, पृ. 550
(40) दादू दयाल की बानी, भाग 2, पृ. 81
(41) पलटू साहिब की बानी, भाग 2, झूलना 59
(42) पलटू साहिब की बानी, भाग 1, कुं 27
(43) पलटू साहिब की बानी, भाग 1, कुं 240
(44) हज़रत सुलतान बाहू, बैत 31
(45) आदि ग्रन्थ, पृ. 1245
(46) आदि ग्रन्थ, पृ. 1380
(47) आदि ग्रन्थ, पृ. 1379
(48) मसनवी बू अली क़लन्दर, पृ. 17
(49) मसनवी मौलाना रूम, दफ़्तर 1, पृ. 187
(50) मसनवी मौलाना रूम
(51) मसनवी मौलाना रूम, दफ़्तर 1, पृ. 187
(52) रविदास दर्शन, पद 102
(53) रविदास दर्शन, पद 101
(54) रविदास दर्शन, पद 100
(55) रविदास दर्शन, पद 114
(56) रविदास दर्शन, पद 99
(57) आदि ग्रन्थ, पृ. 485
(58) आदि ग्रन्थ, पृ. 1375-76
(59) आदि ग्रन्थ, पृ. 1163
(60) पंचतंत्र, पृ. 102, श्लोक 63
(61) आदि ग्रन्थ, पृ. 485
(62) रविदास दर्शन, पद 117
(63) रविदास दर्शन, पद 116
(64) रविदास दर्शन, पद 119
(65) रविदास दर्शन, पद 115
(66) रविदास दर्शन, पद 118
(67) कबीर साखी-संग्रह, पृ. 72
(68) उपदेश राधास्वामी, पृ, 49-50
(69) परमार्थी पत्र, भाग 1, पत्र नं. 75
(70) आदि ग्रन्थ, पृ. 656
(71) आदि ग्रन्थ, पृ. 1019-20
(72) आदि ग्रन्थ, पृ. 1346
(73) आदि ग्रन्थ, पृ. 1346
(74) आदि ग्रन्थ, पृ. 1139

संदर्भ ग्रंथ

हिंदी

कबीर, *कबीर साखी-ग्रन्थ,* पं. महाराज राघवदास जी (टीकाकार), छटा संस्करण, वाराणसी: बाबू बैजनाथ प्रसाद बुक्सेलर, 2004

कबीर, *कबीर साखी-संग्रह,* भाग 1-2, दसवाँ संस्करण, इलाहाबाद : बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, 1996

क़ुरान शरीफ़, मुतर्जम : बरहाशिय: (अनुवादक), सोलहवाँ संस्करण, लखनऊ : लखनऊ किताबघर, 2004

कृपाल सिंह 'ख़ाक', *हज़रत सुलतान बाहू*, प्रथम संस्करण, ब्यास: राधास्वामी सत्संग ब्यास, 2002

जैमल सिंह जी, बाबा, *परमार्थी पत्र,* भाग 1, सत्रहवाँ संस्करण, ब्यास: राधास्वामी सत्संग ब्यास, 2003

दरिया साहिब (बिहारवाले), *दरियाग्रन्थावली,* प्रथम भाग, डॉ.धर्मेन्द्र बह्मचारी शास्त्री, प्रथम संस्करण, पटना: बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, 1954

दादू साहिब, *दादू दयाल की बानी,* भाग 2, इलाहाबाद: बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, 2009

पलटू साहिब, *पलटू साहिब की बानी,* भाग 1, तेरहवाँ संस्करण, इलाहाबाद : बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, 1993

पलटू साहिब, *पलटू साहिब की बानी,* भाग 2, इलाहाबाद : बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, 1995

बाहू, सुलतान, *अब्याते-सुलतान बाहू*, मलिक टननदीन, लाहौर: फ़ज़लदीन, 1915

बुल्लेशाह, *कुल्लियाते-बुल्लेशाह,* डॉ. फ़कीर मुहम्मद फ़कीर, लाहौर : इन्तिशारते-पंजाबी अदाबी अकेदमी, 1970

रविदास, *रविदास दर्शन*, डॉ. बेणीप्रसाद शर्मा (संपादक), प्रथम संस्करण, चंडीगढ़: श्री गुरु रविदास संस्थान, 1973

रूमी, जलालुद्दीन, *मसनवी मौलाना रूम*, दफ़्तर 1, मौलाना क़ाज़ी सज्जाद हुसैन (अनु.), दिल्ली : सबरंग किताब घर, 1974–76

वीर सिंघ, भाई, *वारां भाई गुरदास जी* (सटीक), नौवीं बार, नवीं दिल्ली : भाई वीर सिंघ साहित सदन, 1977

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, *श्री गुरु ग्रन्थ साहिब*, (सन्था सैंचीआं), भाग 1–2, अमृतसर : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, 1999

सहगल, मनमोहन, *उपदेश राधास्वामी*, आठवाँ संस्करण, ब्यास: राधास्वामी सत्संग ब्यास, 2006

स्वामी जी महाराज, *सारबचन संग्रह*, पन्द्रहवाँ संस्करण, ब्यास: राधास्वामी सत्संग ब्यास, 2008

फ़ारसी

बू अली शाह क़लन्दर, *मसनवी बू अली शाह क़लन्दर*, दिल्ली : क़ुतुब खन्नाह नज़ीरियाह, 1962

English

Holy Bible, King James Version, Tennessee: Broadman & Holman Publishers, 1996

Hertel, Johannes Dr. (translater), *The Panchtantra*, 1st ed., Harvard Oriental Series, Cambridge, Massachusetts: The Harvard University Press, 1915

Persian-English

Fazl Mahmud Asiri, *Rubaiyat-i-Sarmad*, Shantiniketan: Visva-Bharti, 1950

परमार्थ संबंधी पुस्तकें

राधास्वामी परंपरा

सारबचन राधास्वामी वार्तिक – हुज़ूर स्वामी जी महाराज
सारबचन संग्रह – हुज़ूर स्वामी जी महाराज

परमार्थी पत्र, भाग1 – बाबा जैमल सिंह जी

गुरुमत सार – महाराज सावन सिंह जी
गुरुमत सिद्धान्त, भाग1, 2 – महाराज सावन सिंह जी
परमार्थी पत्र, भाग2 – महाराज सावन सिंह जी
प्रभात का प्रकाश – महाराज सावन सिंह जी
सन्तमत प्रकाश, भाग1 से 5 – महाराज सावन सिंह जी
सन्तमत सिद्धान्त – महाराज सावन सिंह जी

आत्म-ज्ञान – महाराज जगत सिंह जी
रूहानी फूल – महाराज जगत सिंह जी

जीज़स क्राइस्ट का उपदेश, भाग1 (सेंट जॉन) – महाराज चरन सिंह जी
जीज़स क्राइस्ट का उपदेश, भाग2 (सेंट मैथ्यू) – महाराज चरन सिंह जी
जीवत मरिए भवजल तरिए – महाराज चरन सिंह जी
दिव्य प्रकाश – महाराज चरन सिंह जी
प्रकाश की खोज – महाराज चरन सिंह जी
पारस से पारस – महाराज चरन सिंह जी
सत्संग संग्रह, भाग1 से 6 – महाराज चरन सिंह जी
सन्तमत दर्शन – महाराज चरन सिंह जी
संत-मार्ग – महाराज चरन सिंह जी
संत संवाद, भाग1, 2, 3 – महाराज चरन सिंह जी

अध्यात्म मार्ग – जूलियन जॉनसन
अनमोल ख़ज़ाना – शान्ति सेठी
अन्तर की आवाज़ – सी. डब्लयू. सैंडर्स
अमृत नाम – महिन्दर सिंह जोशी
अमृत वचन – संकलित

उपदेश राधास्वामी – सहगल, शंगारी, 'ख़ाक', भण्डारी
जिज्ञासुओं के लिए – टी. आर. शंगारी
धरती पर स्वर्ग – दरियाईलाल कपूर
नाम-सिद्धान्त – शंगारी, 'ख़ाक', भण्डारी, सहगल
परमार्थ परिचय – हेक्टर एस्पॉण्डा डबिन
प्रेम की विरासत (फ़ोटो ऐलबम)
मार्ग की खोज में – फ़्लोरा ई. वुड
मेरा सतगुरु – जूलियन पी. जॉनसन
रूहानी डायरी, भाग 1, 2 – राय साहिब मुंशीराम
सन्तमत विचार – टी. आर. शंगारी, कृपाल सिंह 'ख़ाक़'
सन्त-सन्देश – शान्ति सेठी
सन्त समागम – दरियाई लाल कपूर
हउ जीवा नाम धिआए – हेक्टर एस्पॉण्डा डबिन
हक़-हलाल की कमाई – टी. आर. शंगारी
हंसा हीरा मोती चुगना – टी. आर. शंगारी

रूहानी परंपरा

कामिल दरवेश शाह लतीफ़ – टी. आर. शंगारी
गुरु अर्जुन देव – महिन्दर सिंह जोशी
गुरु नानक का रूहानी उपदेश – जे. आर. पुरी
तुलसी साहिब – जनक पुरी, वीरेन्द्र कुमार सेठी, टी. आर. शंगारी
नाम-भक्ति: गोस्वामी तुलसीदास – के. एन. उपाध्याय, पंचानन उपाध्याय
परम पारस गुरु रविदास – के. एन. उपाध्याय
पलटू साहिब – राजेन्द्र कुमार सेठी, आर. सी. बहल
बोलै शेख़ फ़रीद – टी. आर. शंगारी
भाई गुरदास – महिन्दर सिंह जोशी
मीरा: प्रेम-दीवानी – वीरेन्द्र कुमार सेठी
शम्स तब्रीज़ी – फ़रीदा मैलिकी
सन्त कबीर – शान्ति सेठी
सन्त चरनदास – टी. आर. शंगारी
सन्त तुकाराम – चन्द्रावती राजवाडे
सन्त दरिया (बिहारवाले) – के. एन. उपाध्याय
सन्त दादू दयाल – के. एन. उपाध्याय
सन्त नामदेव – जनक पुरी, वीरेन्द्र कुमार सेठी, टी. आर. शंगारी
संत रज्जब – जनक गोरवानी
सरमद शहीद – टी. आर. शंगारी, पी. एस. 'आलम'

सहजोबाई और दयाबाई–प्रभुप्रेम का रूप – टी. आर. शंगारी
साईं बुल्लेशाह – जनक पुरी, टी. आर. शंगारी
सिंध की त्रिवेणी – जनक गोरवानी
हज़रत सुलतान बाहू – कृपाल सिंह 'ख़ाक'
बिनती और प्रार्थना के शब्द – संकलित
संतों की बानी – संकलित

विश्व धर्मों में आध्यात्मिकता

अनंद साहिब – टी. आर. शंगारी
आसा की वार – टी. आर. शंगारी
जपु जी साहिब – टी. आर. शंगारी
जैन धर्म: सार सन्देश – के. एन. उपाध्याय
नितनेम की वाणियाँ और सलोक महला ९ – टी. आर. शंगारी
परमार्थी साखियाँ
बौद्धधर्म: उत्पत्ति और विकास – के. एन. उपाध्याय
रामचरितमानस का सन्देश – एस. एम. प्रसाद
शब्द की महिमा के शब्द – महाराज सावन सिंह जी
सिध गोस्ट और बारह माहा – टी. आर. शंगारी
सुखमनी – टी. आर. शंगारी

शाकाहार व्यंजन

वैष्णव भोजन, भाग 1, 2

बच्चों के लिये पुस्तकें

एक नूर ते सभ जग उपजआ – विक्टोरिया जोन्ज़
आत्मा का सफ़र – विक्टोरिया जोन्ज़

विविध विषय

नारी को अधिकार दो – लीना चावला

To order books on the internet, please visit : www.rssb.org
भारत में किताबें ख़रीदने के लिये कृपया नीचे लिखे पते पर लिखें:

राधास्वामी सत्संग ब्यास
बी. ए. वी. डिस्ट्रिब्यूशन सेंटर, 5 गुरु रविदास मार्ग
पूसा रोड, नई दिल्ली 110005

Haq Halal ki Kamai
(Hindi)

ISBN 978-81-8466-404-1